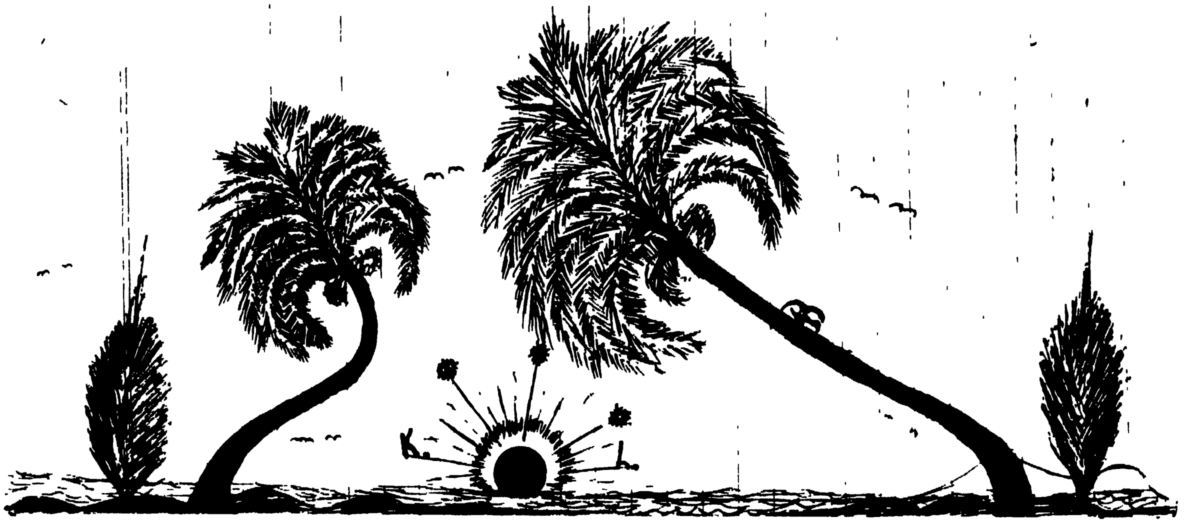

चित्र   कानोलाल बड़गोत्या, उज्जैन

चकमक बाल विज्ञान पत्रिका
वर्ष 4   अंक 1   जुलाई, 1988

संपादक:
विनोद रायना
संपादक मंडल:
राजेश उत्साही, हरिप्रसाद जोशी
कला:
जया विवेक
उत्पादन/वितरण
हिमांशु बिस्वास, कमलसिंह

चकमक का चंदा
छमाही: 15 रुपए
वार्षिक: 30 रुपए
डाक खर्च मुफ्त
चंदा, मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट से एकलव्य के नाम पर भेजें।
कृपया चेक न भेजें।

पत्र/चंदा/रचना भेजने का पता:
एकलव्य
ई-1/208, अरेरा कालोनी
भोपाल-462 016 (म.प्र.)

इस अंक में

2 संपादकीय
6 सवालीराम
8 धारावाहिक : नन्हा राजकुमार
13 कविता : सावनियां की हरी दुपहरी
14 कहानी : गुलेल का खेल
19 अपनी प्रयोगशाला
20 कैसे बनी दियासलाई
22 गिजुभाई : बालक घर में क्या करे!
27 मेरा पन्ना
30 माथा पच्ची
32 नारू की मार
39 सूचना : प्रावीण्य छात्रवृत्तियां

आवरण : जया विवेक

एकलव्य एक स्वैच्छिक संस्था है जो शिक्षा, जनविज्ञान एवं अन्य क्षेत्रों में कार्यरत है। चकमक, एकलव्य द्वारा प्रकाशित अव्यवसायिक पत्रिका है। चकमक का उद्देश्य बच्चों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति, कल्पनाशीलता, कौशल और सोच को स्थानीय परिवेश में विकसित करना है।

इस अंक से चकमक चौथे वर्ष में प्रवेश कर रही है। पाठकों और रचनाकारों को बधाई। जिन्होंने अक्टूबर, 86 का अंक पढ़ा है वे जानते हैं कि चकमक कैसे शुरू हुई। उसका विचार कैसे आया। पिछले तीन वर्षों में चकमक को कई रचनाकारों ने अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया है, पर यह अभिव्यक्ति इस विशाल प्रदेश को देखते हुए न के बराबर है।

ऐसे में उन छोटे-छोटे और सीमित प्रयासों का महत्व बढ़ जाता है जो इस अभिव्यक्ति को मंच देने के लिए हमारे आसपास हो रहे हैं।

शहीद भगतसिंह पुस्तकालय एवं सांस्कृतिक केंद्र, पिपरिया एवं किशोर भारती, बनखेड़ी का नाम चकमक के पाठकों के लिए अपरिचित नहीं है। ये दोनों मिलकर बच्चों के लिए विभिन्न गतिविधियां आयोजित करते हैं, साथ ही 'बाल चिरैया' नामक एक पत्रिका भी निकालते हैं। यह पत्रिका चकमक की तरह प्रेस में नहीं छपती बल्कि सायक्लोस्टाइल होती है। शुरू के कुछ अंक हाथ से स्टेंशिल काटकर निकाले गए थे। अब टाइप करके सायक्लोस्टाइल किया जाता है। अप्रैल, 88 तक 30 अंक प्रकाशित हो चुके थे। पृष्ठों की संख्या 8 से 16 तक होती है। और कीमत सिर्फ एक चवन्नी। इसमें पिपरिया तथा उसके आसपास के गांवों के बच्चों की रचनाएं प्रकाशित होती हैं। चित्र भी होते हैं।

रचनाएं मज़ेदार होती हैं। पर उनमें हमारे रोज़मर्रा के जीवन की तमाम घटनाओं की अभिव्यक्ति होती है। जैसे ट्यूशन के मज़े, खा पीकर लड़ना, स्कूल में जगह नहीं, कुएं में कुत्ता गिरा, ट्रक टकराए, बस में पत्थर आदि आदि। असली मज़ा तो तुम खुद बाल चिरैया पढ़कर ही ले सकते हो।

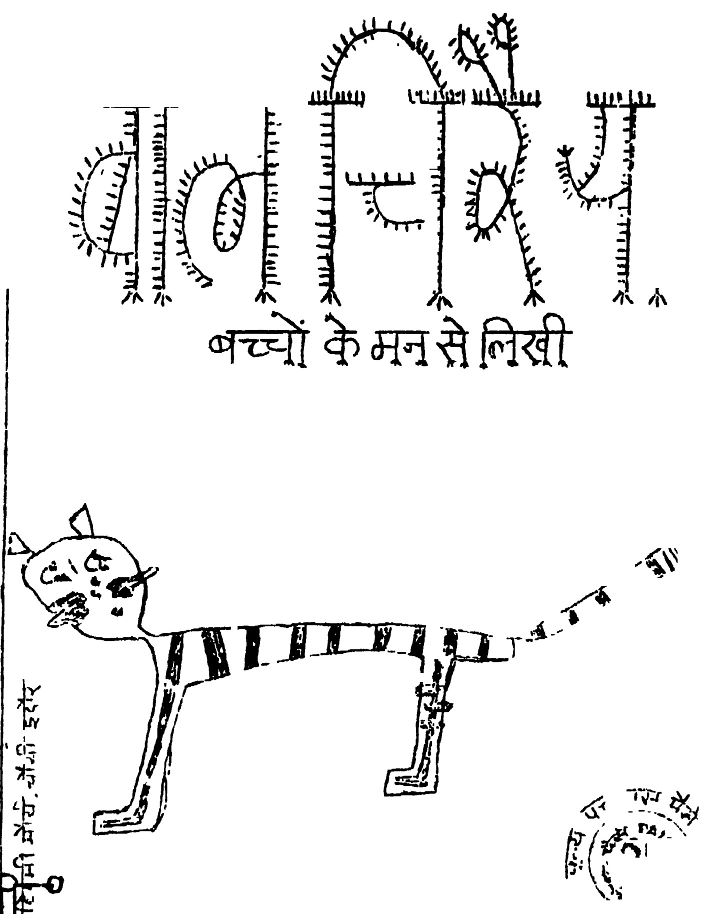

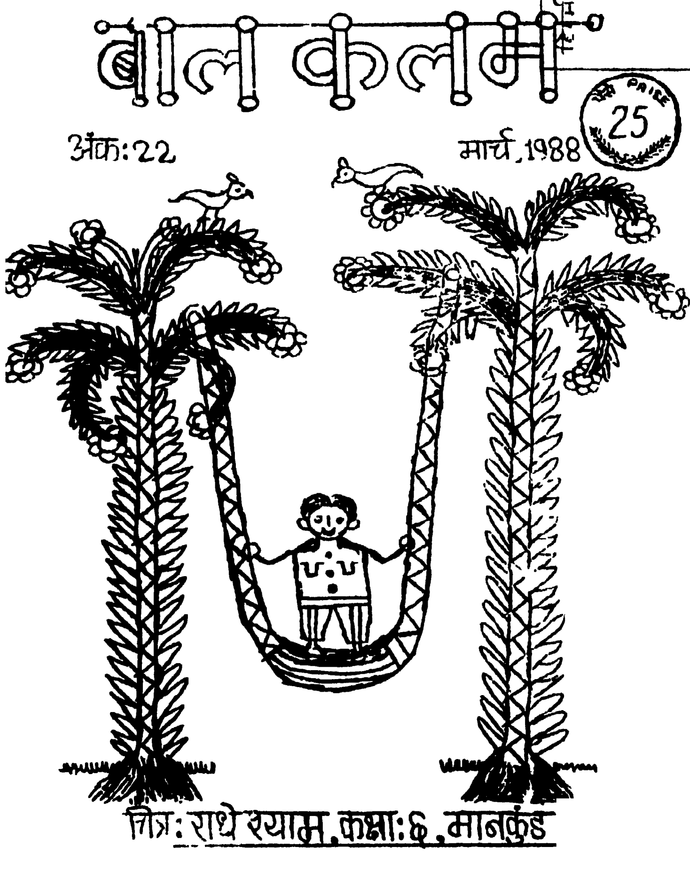

ऐसी ही एक पत्रिका एकलव्य के देवास केंद्र से प्रकाशित होती है 'बालकलम'। इसमें देवास तथा उसके आसपास के गांवों के बच्चे अपनी रचनाएं भेजते हैं।

जयपुर, राजस्थान से प्रकाशित ऐसी दो पत्रिकाएं भी हमारे देखने में आईं—टिफिन और टाबरां री बात (बच्चों की बात)। ये भी सायक्लोस्टाइल हैं।

संभव है तुम्हारे आसपास भी ऐसा कोई प्रयास हो रहा हो। यदि तुम्हें जानकारी हो तो हमें ज़रूर भेजना। या तुम खुद ही ऐसी पत्रिका निकालना चाहो तो कोशिश करो। अपने गुरूजी या बड़े मित्रों से बात करो।

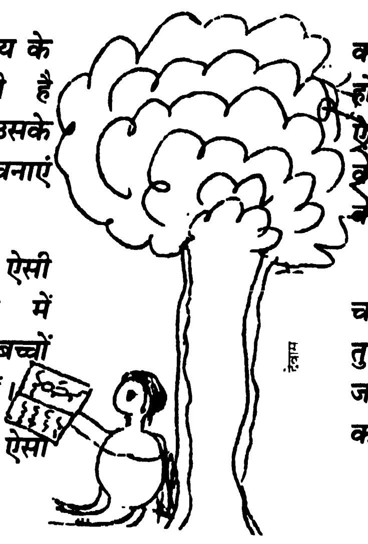

इन पत्रिकाओं से कुछ रचनाएं हम चकमक में समय-समय पर छापते रहेंगे। तुम अगर इन्हें बुलवाना चाहते हो या कुछ जानकारी चाहते हो तो इन पतों पर संपर्क करो—

☐बाल कलम, एकलव्य, 41/1 राधागंज, देवास-455 001

☐टिफिन तथा टाबरां री बात, द्वारा संधान बी 118 ए, मंगलमार्ग, बापूनगर, जयपुर-302 015

☐बाल चिरैया, द्वारा शहीद भगतसिंह पुस्तकालय एवं सांस्कृतिक केंद्र, जैन मंदिर के पास, पिपरिया, होशंगाबाद-461 775

एक का दो

हमारे स्कूल में एक दिन एक जादूगर आया। सबसे पहले बड़े गुरुजी से जाकर मिला। कि स्कूल के बच्चों को कुछ खेल दिखाने का समय दे दीजिए। बड़ी मुश्किल से गुरुजी तैयार हो गए। फिर अपनी कक्षा अध्यापक के द्वारा सभी बच्चों को बताया गया, दो बजे आप लोगों को जादू का खेल दिखाया जाएगा। सभी बच्चे घर से पचीस-पचीस पैसे लेकर आएंगे।

दोपहर को छुट्टी में हम लोग खाना खाने घर गए और पचीस पैसे साथ में लेकर आए। सभी बच्चे इकठ्ठे हो गए। जादू वाले के साथ एक लड़का था सबसे पहले डमरू बजा और वंशी बजने लगी। उसके बाद झोले में हाथ डाल कर एक रुपया निकाला उसको दो का नोट बना दिया। इसी प्रकार एक कबूतर को—दो कबूतर बना दिया। दो, तीन खेल और दिखाए। अंत में बच्चों ने पैसे खेल वाले को देकर खूब हो हल्ला के साथ अपने-अपने घर की ओर भागे।

☐ **राजेन्द्रसिंह ठाकुर, आठवीं, मानकुंड**
(बाल कलम)

चित्र · वर्षा, तीसरी, देवास

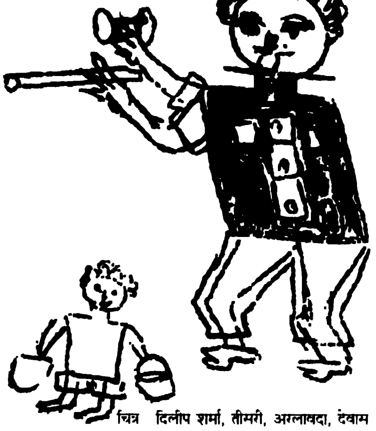

चित्र दिलीप शर्मा, तीसरी, अरलावदा, देवास

दांतली

ये दांतली कैसी
घास काटे जैसी

ये घास कैसी
गाय खाए जैसी

ये गाय कैसी
दूध दे जैसी

ये दूध कैसा
लड्डू बनाए जैसा

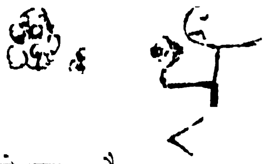

ये लड्डू कैसा
बच्चे खाएं जैसा।

[ ] बगनाराम रजाक
कक्षा दूसरी, गोपालपुर

हमारा साथी

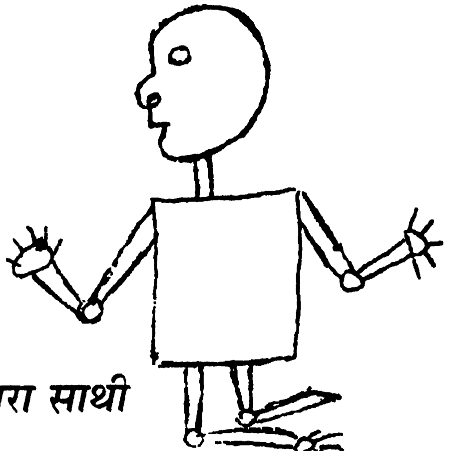

हमारा साथी गोपाल पूरी तरह विकलांग है। यह पैरों से चल नहीं पाता है। हम सब इधर-उधर फिरते रहते हैं। ये बैठा रहता है! इसकी सरकार कोई सुनाई नहीं कर रही है। गांव में स्कूल होने के कारण कक्षा पांच तक पढ़ रहा है। इसके लिए कक्षा छह की क्या व्यवस्था होगी?

। कक्षा पांच के बच्चे, गांव पंपालिया

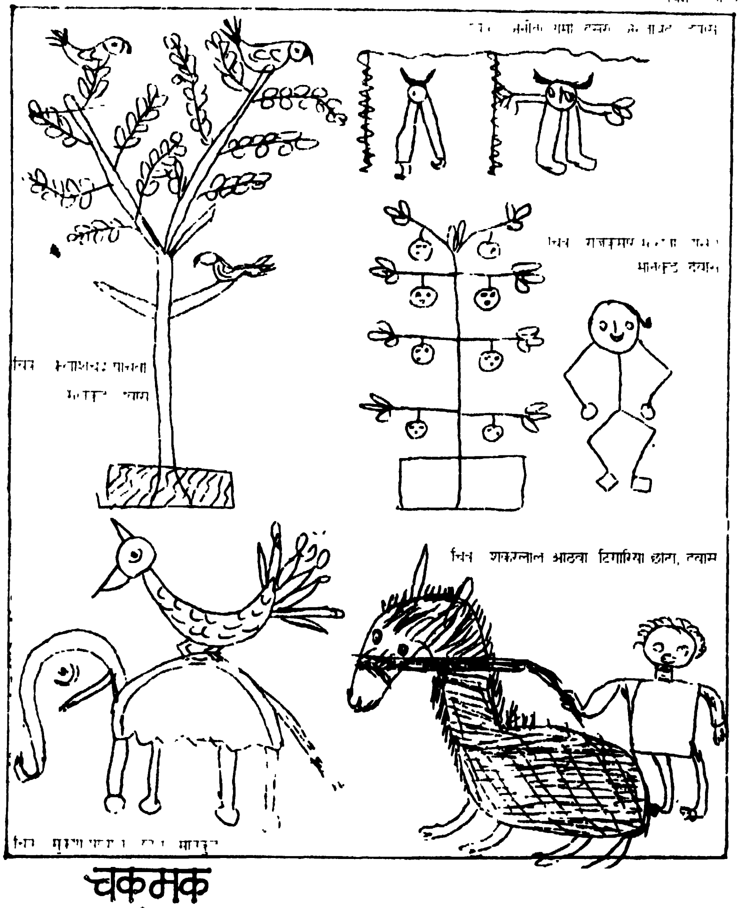

मन तरसे

मन तरसे भाई मन तरसे
बाल मेला जाने को मन तरसे
मन तरसे भाई मन तरसे
चित्र बनाने को मन तरसे
मन तरसे भाई मन तरसे
कठपुतली बनाने को मन तरसे
मन तरसे भाई मन तरसे
खेल खेलने को मन तरसे।

[ ] गोपाल पटेल, टिगरियाछोटा।
(बालकलम)

चित्र : रमेशचंद्र मालवी, आठवीं, अरलावदा, देवास

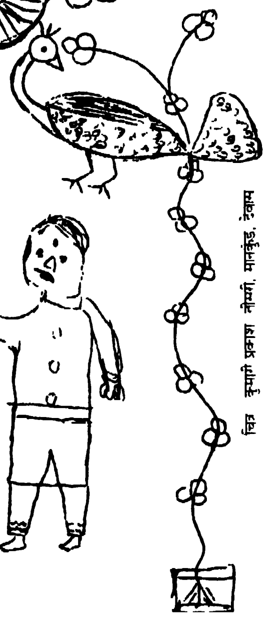

चित्र कुमारी प्रकाश नीमा, मानकुंड, देवास

चित्र जगदीश पटेल, आठवीं, टिगारिया [illegible]

छोटे भाई का गुस्सा

दिन रविवार की बात है। हमारा छोटा भाई रो रहा था। हमने कहा कि भाई मत रो। उसने कहा मत बोलो, उल्लू वाले।हमने कहा कि तुझे ये कौन सिखा गया। बो बोला कि टूटा-टूट। फिर मैंने उसे डांटा वह बोला कि अम्मू साले। मैंने उसे चुप करने के लिए कहा कि भाई नीरज बाबू अपने छीताफल लेंगे तो वह चुप हो गया।

मेरे पास पैसे नहीं थे। हमारे यहां एक छीताफल वाली आती है। मैंने उसे छोटा छीताफल लिवा दिया तो उसने फेंक दिया। कहने लगा कि बड़ा छीताफल लिवाओ तो मैंने कहा कि नीरज बाबू बड़ा लोगे, उसने कहा हां,तो मैंने उसे बड़ा छीताफल लिवा दिया। फिर हम घर आ गए।

☐ केहर सिंह राजपूत, सातवीं, पिपरिया
(बालचिरैया)

बकरी लपकी ज्वार में

जब मैं शुरू में पढ़ने गया। जब पढ़ते-पढ़ते मुझे पन्द्रह दिन हो गए। एक दिन दोपहर को छुट्टी हुई। और मैं इमली खाने चला गया। दूसरे दिन मैं स्कूल गया तो सर ने मुझे पांच चांटे लगाए। फिर मैंने सोचा कि सर तो मारते है। मैंने स्कूल जाना बंद कर दिया। फिर घर वालों ने बकरी खरीद दी। मुझे बकरी चराने भेजते, नहीं जाता तो मारते। एक दिन बकरी चराने गया। मैं एक कुएं में नहाने लग गया। जब तक बकरी ज्वार में घुस गई। खेत वाले ने मुझे इतना मारा कि मुझसे चला नहीं गया, फिर मैंने घर वालों से कहा कि मैं स्कूल जाऊंगा। अब बकरी में नहीं चराऊंगा।

☐ रामप्रसाद मथानिया, सातवीं, मानकुंड
(बालकलम)

अस्पताल में जगह नहीं बची

दादू कुल्फी वाले की घंटी की टनटनाहट बड़ा बाज़ार देवास के मोहल्ले में सुनाई पड़ी कि अपने-अपने घरों से बच्चे निकलना शुरू हो गए। कुल्फी ठेला के इर्द-गिर्द इकठ्ठे बच्चे कुल्फियां खरीद कर खाने लगे, थोड़ी देर बाद कुछ बच्चों ने बोला कि आज की कुल्फी खट्टी है। तो दादू बोला कि आम का रस डाला है। और कई लोगों ने शिकायत की। एक, दो बच्चों को उल्टी, दस्त शुरू हो गए। जब ठेले वाले को पता चला, तो उसने सारी कुल्फी मुफ्त में बांट कर आगे बढ़ गया।

बस थोड़ी देर में ही जिधर देखो उधर ही उल्टी, दस्त शुरू हो गए, लोग घबरा गए। पूरे मोहल्ले में शोर मच गया। लोगों को अस्पताल ले जाने लगे।

अस्पताल में इतने बीमार लोग इकट्ठे हो गए कि जगह ही नहीं बची तो कमरे के बाहर लोगों को रखा गया। सलाईन की बोतल स्टैण्ड नहीं बचे तो लोग बोतल को हाथों में पकड़ कर खड़े रहे।

देर रात तक लोगों को अपने-अपने घर वापिस किया गया।

☐ सुनील गुप्ता, नवमीं, देवास
(बाल कलम)

सवालीराम

■ ***बिजली की खोज कैसे हुई और किस वैज्ञानिक ने की थी?***

—विष्णु कुमावत, लूनाहेड़ा

☐ विद्युत (बिजली) के कारण मानव जीवन में बहुत परिवर्तन आए हैं, पर इन परिवर्तनों का इतिहास बहुत पुराना नहीं है। बड़े पैमाने पर विद्युत का उत्पादन पहली बार अब से 90 साल पहले अमेरिका में हो पाया था। वास्तव में विद्युत की खोज किसी एक वैज्ञानिक या व्यक्ति ने नहीं की। यह धीरे-धीरे सामने आई। और अलग-अलग व्यक्तियों ने इसे विभिन्न तरीकों से आगे बढ़ाया।

ईसा से लगभग 600 वर्ष पूर्व यूनानी दार्शनिक व गणितज्ञ थेल्ज़ ने विद्युत शक्ति को पहचाना था। वह अपने टेबिल पर रखे ऐम्बर (राल,जीवाश्मों से बना हुआ कड़ा पदार्थ जो पत्थर जैसा दिखता है) की सुंदरता देख रहा था। उसकी धूल साफ करने के लिए थेल्ज़ ने उसे अपने कपड़ों पर रगड़कर टेबिल पर रख दिया। उसने देखा कि ऐम्बर के पास पड़ा कागज़ का छोटा टुकड़ा खिंचकर उस से चिपक गया। थेल्ज़ को आश्चर्य हुआ। उसे चुंबक के आकर्षण बल के बारे में मालूम था। पर चुंबक तो बिना रगड़े ही लोहे को आकर्षित करता है। थेल्ज़ ने ऐम्बर के इस गुण की परीक्षा कई अन्य वस्तुओं के साथ की। उसने पाया कि कुछ और वस्तुएं ऐम्बर के प्रति आकर्षित होती हैं। ऐसा क्यों होता है? थेल्ज़ ने इस सवाल पर बहुत विचार किया। जब वह कोई उत्तर नहीं खोज पाया तो उसने विस्तार से अपने प्रयोग और अवलोकनों के बारे में लिख लिया।

थेल्ज़ के शिष्यों ने इस बारे में थोड़ी-बहुत जानकारी और जोड़ी। पर इस जानकारी का संबंध विद्युत व मनुष्य जैसी अन्य जीवित वस्तुओं के बीच होने वाली क्रियाओं से अधिक था। जैसे कि कुछ मछलियों में विद्युत शक्ति होती है। इन मछलियों का इस्तेमाल कुछ रोगों को दूर करने के लिए किया गया। उदाहरण के तौर पर 'इलेक्ट्रिक ईल' नामक मछली का उपयोग लगातार सिरदर्द व गाऊट (गठिया) बीमारी के इलाज के लिए किया जाता था। इलाज शायद कुछ इस तरह होता था; मछली को पानी से भरे बर्तन में रखते थे और पीड़ित अंग को बर्तन से छुआते थे।

यहां एक मज़ेदार बात बताएं। कई हज़ार साल पहले लिए गए इस अवलोकन, कि कई मछलियों में विद्युत शक्ति होती है, का कारण आज तक मालूम नहीं हो पाया है। लंदन में वैज्ञानिकों की एक बहुत पुरानी समिति है जिसका नाम है रॉयल सोसाइटी। 1960 में इस समिति ने अपनी स्थापना के 300 वर्ष पूरे किए। इस उपलक्ष में एक समारोह हुआ। समारोह में कांच के एक बड़े पानी से भरे बर्तन में एक 'इलेक्ट्रिक रे' नामक मछली रखी गई थी। और बर्तन में एक मीटर लगा था जो बिजली की वोल्टेज़ नापता था। जब मछली आराम से रहती थी तो मीटर शून्य वोल्टेज़ बताता था। लेकिन जब तेज़ी से इधर-उधर तैरती तो 400 वोल्ट तक वोल्टेज़ दर्ज होती थी। कांच के बर्तन के सामने एक पट्टिका पर लिखा था कि 'आज तक इस अवलोकन का कारण समझा नहीं जा सका है।' यह अवलोकन रॉयल सोसाइटी की स्थापना के कई हज़ार साल पहले से चला आ रहा है।

थेल्ज़ व उसके शिष्यों के अवलोकनों के बाद विद्युत के बारे में सैंकड़ों वर्ष कोई काम नहीं हुआ। इस दिशा में अगला महत्वपूर्ण कदम 1600 ई. में इंग्लैंड के चिकित्सक व भौतिक शास्त्री विलियम गिलबर्ट ने उठाया।

गिलबर्ट ने कई वस्तुओं के साथ थेल्ज़ जैसा ही प्रयोग करके देखा। उसने पाया कि कुछ वस्तुएं ही रगड़ने पर दूसरी वस्तु को आकर्षित करती हैं। गिलबर्ट ने

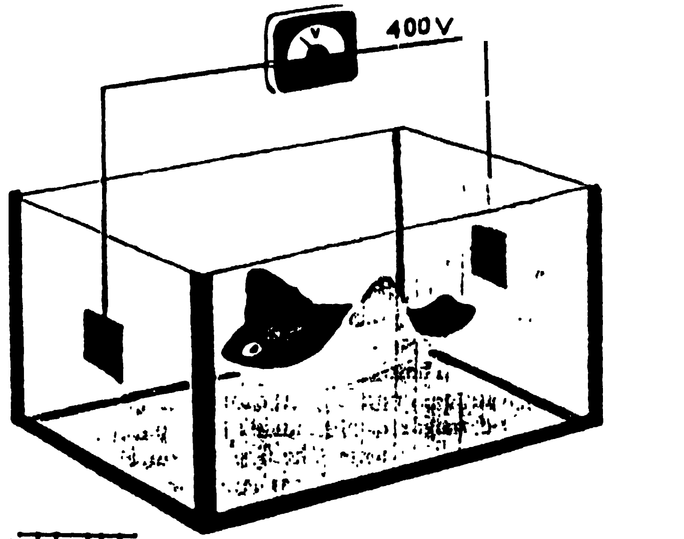

इस आकर्षण बल को 'इलेक्ट्रिसिटी' नाम दिया। ग्रीक भाषा के इलेक्ट्रा (ऐम्बर) शब्द से ही यह नाम उसने लिया। और यहीं से विद्युत की असली खोज शुरु हुई।

जर्मनवासी ऑटो वान गुएरिक ने एक छोटी मशीन बनाकर उससे अधिक मात्रा में विद्युत शक्ति प्राप्त की। उसने यह भी पाया कि यह शक्ति जहां उत्पन्न होती है वहां से अन्य धातुओं में प्रवाहित होकर वहां भी आकर्षण शक्ति उत्पन्न करती है। इन्हीं प्रयोगों को आगे बढ़ाते हुए 1729 में स्टीफन ग्रे नामक वैज्ञानिक ने 300 मीटर लंबे धागे में विद्युत धारा को प्रवाहित किया। एक-एक कदम करते हुए यह खोज आगे बढ़ती गई।

बेंजामिन फ्रेंकलिन की पतंग उड़ाने वाली कहानी तुमने सुनी ही होगी। इस अमेरिकी वैज्ञानिक ने पहली बार आकाशीय विद्युत को पहचाना। फ्रेंकलिन ने एक मजबूत पतंग को रेशम की डोरी से बारिश के समय आकाश में उड़ाया। डोरी के दूसरे छोर में उसने एक चाबी बांध ली थी। आकाश में बादलों की टकराहट से उत्पन्न विद्युत डोरी से होती हुई चाबी तक पहुंची। जब फ्रेंकलिन ने चाबी को छुआ तो उसे झटके महसूस हुए। उसने आगे अध्ययन करते हुए पाया कि विद्युत जहां उत्पन्न होती है वहां से वह कम विद्युत क्षेत्र की ओर जाती है। जिसे उसने धनात्मक (+) छोर से ऋणात्मक (-) छोर की ओर बढ़ना कहा। यह बात आज भी हम उसी रूप में मानते हैं। टार्च या ट्रांजिस्टर का सेल देखो उस पर तुम्हें धन, ऋण के चिन्ह मिलेंगे। जब हम इन दोनों छोरों को जोड़ेंगे तभी विद्युत परिपथ पूरा होगा।

फ्रेंकलिन के अनुसंधान के आधार पर ही मकानों में तड़ित चालक लगाए जाते हैं। मकान के सबसे ऊपरी सिरे पर लोहे का एक मोटा तार लगाकर उसका दूसरा सिरा जमीन में गाड़ दिया जाता है। यदि कभी आकाशीय विद्युत पृथ्वी पर गिरे तो वह मकान को नुकसान न पहुंचाकर इस तड़ित चालक के सहारे ज़मीन में चली जाए। इस तरह बेंजामिन फ्रेंकलिन पहला व्यक्ति था जिसने प्राकृतिक विद्युत शक्ति को पहचानकर मनुष्यों के लिए उसका एक क्रियात्मक रूप दिया।

इटालियन भौतिक शास्त्री अलेक्सांद्रो वोल्टा ने विद्युत खोज को आगे बढ़ाते हुए सिद्ध किया कि विद्युत शक्ति रासायनिक क्रियाओं से भी उत्पन्न होती है। परंतु उसके सामने भी यह सवाल था कि इसे मानव के लिए उपयोगी कैसे बनाया जाए? अपने इस सवाल को हल करने की कोशिश में ही उसने दुनिया का पहला विद्युत सेल बनाया। वोल्टा ने तांबें और जस्ते की कुछ प्लेटें बनाईं और उन्हें क्रमशः एक दूसरे के ऊपर रखा। इनके बीच गंधकाम्ल में भिगोया हुआ सोख्ता पेपर रखा। ऊपर-नीचे की प्लेटों को उसने तार से जोड़ा। तार में विद्युत धारा प्रवाहित होने लगी। इस तरह रासायनिक क्रियाओं से विद्युत उत्पन्न करने की विधि हाथ लगी। विद्युत सेल के आविष्कार ने तार, टेलीफोन आदि जैसे कई अन्य आविष्कारों के लिए रास्ता खोला।

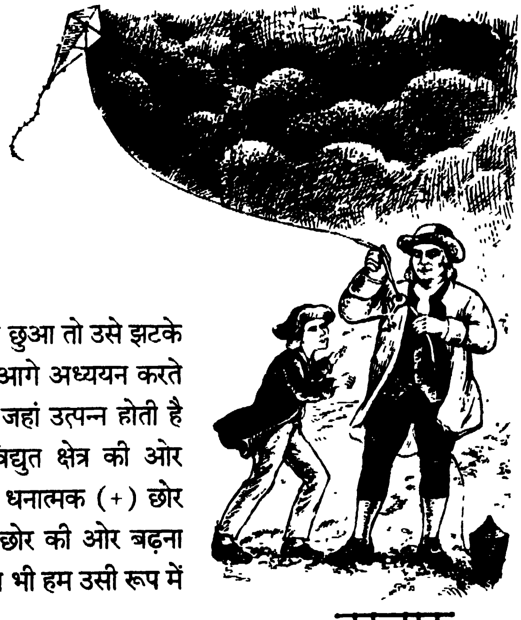

1831 में इंग्लैंड में माइकेल फैराडे ने पहला विद्युत जनरेटर बनाया। इसी दौरान अमेरिका में जोसफ हेनरी ने भी जनरेटर बनाया। जनरेटर बन जाने के बाद ही विद्युत का उपयोग प्रयोगशाला से बाहर संभव हो सका। फैराडे ने 'U' आकार की चुंबक ली। इस चुंबक के दोनों ध्रुवों के बीच चुंबकीय शक्ति का सघन क्षेत्र होता है। उसने तांबें की एक छड़ को क्रेंक हेंडिल के सहारे ऐसे रखा कि हेंडिल को घुमाने पर उसके सिरे चुंबक के दोनों ध्रुवों के नजदीक से गुजरें। उसने क्रेंक मे एक तार जोड़ कर उसका संपर्क एक मीटर से जोड़ा। हेंडिल को घुमाने पर तांबें की छड़ घूमी और उससे विद्युतधारा प्रवाहित होकर मीटर तक पहुंची। मीटर की सुई एक दिशा में घूमी। हेंडिल को दूसरी ओर घुमाने पर मीटर की सुई विपरीत दिशा में घूमी। इसी प्रयोग के आधार पर फैराडे ने विद्युत धारा को समान रूप से निरंतर पैदा करने का तरीका खोजा।

विद्युत की खोज की यह संक्षिप्त कहानी है। आज हम कितने प्रकार से विद्युत प्राप्त करते हैं? जनरेटर की रचना कैसी होती है? हमारे घरों, कारखानों तक विद्युत कैसे पहुंचती है? ऐसे अनेक सवाल हैं, जिनके बारे में फिर कभी अवसर मिलने पर चर्चा करेंगे। ●

'आश्चर्य लोक में एलिस' और 'मानव की कहानी' धारावाहिक तुमने पढ़े और पसंद भी किए। इसी कड़ी में इस अंक से एक नया धारावाहिक शुरू कर रहे हैं—नन्हा राजकुमार। यह एक फ्रेंच लघु उपन्यास 'द प्ती प्रैंस' का हिंदी अनुवाद है। इसे कुछ वर्ष पहले गोरखपुर के हमारे एक साथी श्री लालबहादुर वर्मा ने मूल फ्रेंच से अनूदित किया था और वहीं की एक प्रकाशन संस्था दृष्टिकोण ने प्रकाशित किया था। इन्हीं के सौजन्य से हम इसे प्रस्तुत कर रहे हैं।

नन्हा राजकुमार का लेखक सैंतेक्ज़ूपेरी एक पायलट था। कहानी भी एक पायलट की है। पायलट की भेंट रेगिस्तान में एक नन्हे राजकुमार से होती है। पायलट अपना रास्ता भटक गया है—मौत उसके सामने खड़ी है। लेखक ने जब यह उपन्यास लिखा तब द्वितीय विश्वयुद्ध चल रहा था।

पिछले चालीस से भी अधिक वर्षों में इस उपन्यास को विश्व के करोड़ों बच्चों व बड़ों ने अनेक भाषाओं में पढ़ा है। इसकी लोकप्रियता का अंदाजा नहीं लगाया जा सकता। इसमें चित्र भी लेखक ने ही बनाए हैं। चित्रों के लिए हम पिकोलो प्रकाशन के आभारी हैं।

लेखक ने अपने एक दोस्त को उपन्यास समर्पित करते हुए लिखा,

लेओं वेर्थ को

बच्चों मैं क्षमा चाहता हूं क्योंकि मैंने यह पुस्तक एक वयस्क को समर्पित की है। कारण?— यह वयस्क दुनिया में मेरा सबसे प्रिय दोस्त है। फिर वह सब कुछ समझ सकता है—बच्चों की पुस्तकें भी। एक और बात है, वह इस वक्त फ्रांस में भूख और सर्दी से जूझ रहा है। ये सब कारण पर्याप्त न लगें तो मैं पुस्तक अपने मित्र के बचपन को समर्पित कर सकता हू। आखिर सारे के सारे वयस्क कभी बच्चे ही तो थे (पर कहां याद रहती है इसकी उन्हें) तो समर्पण के शब्द बदल देता हूं—

लेओं वेर्थ को

जब वह बच्चा था!

नन्हा राजकुमार

मैं कोई छह साल का रहा होऊंगा। एक किताब मिल गई—जंगल की सच्ची कहानियां। उसमें एक अद्भुत तस्वीर थी। अजगर एक जंगली जानवर को निगल रहा था। यह रही वह तस्वीर।

किताब में लिखा था कि अजगर अपने शिकार को पूरा का पूरा निगल जाता है बिना चबाए। फिर तो वह हिल भी नहीं सकता और छह महीने लगातार उसे पचाता हुआ बस सोता रहता है।

तब से जंगल की इस भयानक घटना पर मैं बराबर सोचता रहा और एक दिन अपनी रंगीन पेन्सिल से मैंने पहली बार एक चित्र बनाया।

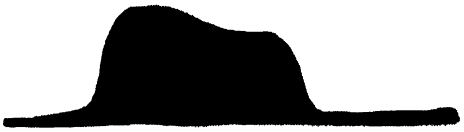

अपना यह चित्र मैंने बड़े लोगों को दिखाया। मैंने पूछा, "इसे देखकर डर लगता है या नहीं?"

उन्होंने उत्तर दिया, 'भला टोपी से डर क्यों लगेगा?'

मैंने टोपी तो बनाई नहीं थी। मैंने एक अजगर बनाया था जो हाथी को निगल कर पचा रहा था। आखिर मैंने सांप के पेट के अंदर की भी तस्वीर बनाई। ताकि ये बड़े लोग भी समझ सकें। ये बिना समझाए कुछ नहीं समझते। मेरा दूसरा चित्र कुछ इस प्रकार था।

उन लोगों ने मुझे सलाह दी कि मुझे अजगर के चित्र बनाना छोड़कर भूगोल, इतिहास, गणित और व्याकरण में मन लगाना चाहिए। और इस तरह उस नन्ही सी उम्र में ही मुझे अपनी महान कलाकार बनने की इच्छा त्याग देनी पड़ी। मेरे

पहले दो चित्रों की असफलता पर ही मुझे हतोत्साहित कर दिया गया। ये बड़े लोग अपने आप कुछ नहीं समझते और बच्चों को इन्हें समझाते रहना आसान नहीं।

अब मुझे दूसरा पेशा चुनना पड़ा। और मैंने हवाई जहाज़ चलाना सीख लिया। सारी दुनिया में उड़ता फिरा। भूगोल पढ़ना काफी काम आया। चीन हो या अरीजोना, एक ही झलक में पहचान सकता था। यदि हवाई जहाज़ भटक जाए तो भूगोल पढ़ना बहुत काम आता है।

अपनी उड़ानों के दौरान अनेक महत्वपूर्ण लोगों से परिचय हुआ। मैंने उनके साथ काफी समय बिताया। उन्हें करीब से देखा-समझा। पर मेरी उनके बारे में राय नहीं बदली।

जब भी कोई महानुभाव मिलते जो थोड़े जागरूक लगते तो मैं उन्हें अपना बनाया हुआ पहला चित्र, जिसे मैं हमेशा पास रखता था, दिखाता। मैं देखना चाहता था कि वे इसे समझ पाते हैं या नहीं। हमेशा यही उत्तर मिलता, "यह तो टोपी है।" फिर मैं उनसे न अजगर की बात करता, न जंगल की न सितारों की। मैं उन्हीं की तरह मौसम, ताश, राजनीति या फैशन की बातें करने लगता और वे मुझ जैसे समझदार व्यक्ति से मिल कर खुश होते।

छह साल पहले तक बिना किसी से मन की बात किए, एकाकी सा, जीता रहा। एक दिन सहारा के रेगिस्तान में मेरा जहाज़ बिगड़ गया और मुझे उतरना पड़ा। न तो मेरे साथ कोई मिस्त्री था न यात्री। झख मार कर अकेले ही उसे ठीक करने की बात सोची। मेरे लिये जीवन-मृत्यु का प्रश्न था। मेरे पास मुश्किल से आठ दिनों के लिए पीने का पानी था।

पहली शाम, बस्ती से हज़ारों मील दूर, रेत पर लेटा, लग रहा था सागर में जहाज़ से टूटा बहता हुआ एक तख्ता हूं। कल्पना कीजिए कि ऐसे में मुझे कितना आश्चर्य हुआ होगा जब तड़के एक अजीब कच्ची सी आवाज ने मुझे जगाया।

"सुनिए! मेरे लिए एक भेड़ की तस्वीर बना दीजिए।"

"एक भेड़ का चित्र............"

मैं तो उछल पड़ा जैसे पलीते पर पैर पड़ गया हो। आंख मली और ठीक से देखा। एक विचित्र और छोटा सा लड़का मुझे चुपचाप निहार रहा था। बाद में मैंने याद करके उसकी जो सबसे अच्छी तस्वीर बनाई वह यह रही।

वह इस तस्वीर से कहीं अधिक आकर्षक था। तस्वीर उसके जैसी नहीं बनी तो मेरा क्या दोष। बचपन में ही बुजुर्गों ने हतोत्साहित जो कर दिया था। तब से मैं अजगर के अलावा कुछ भी बनाना नहीं सीख पाया।

अचंभे में पड़ा मैं इस छाया सी आकृति को खुली-खुली आंखों से देखता रहा। भूलिए मत कि मैं बस्ती से हज़ारों मील दूर था और यह लड़का न तो भटका हुआ लगता था न भूखा, प्यासा या डरा हुआ। जरा भी नहीं लगता था कि वह इस निर्जन में खो गया है। आखिर जब बोली निकली तो

मैंने कहा : "पर......पर तू यहां क्या कर रहा है?" और धीरे से जैसे एक भारी बात कहनी हो, उसने दोहराया, "मेरे लिए एक भेड़ का चित्र बना दीजिए।"

सब कुछ अजीब और रहस्यमय लग रहा था बात टालने का साहस नहीं हुआ। निर्जन स्थान में जबकि सर पर मौत मंडरा रही हो यह चित्र बनाने की बात हास्यास्पद लगी फिर भी मैंने जेब से कागज़ और कलम निकाल लिया। लेकिन मैंने तो विशेषकर इतिहास, भूगोल और व्याकरण पढ़ी थी। मैंने थोड़ा झुंझला कर कहा कि "मुझे चित्र बनाने नहीं आते।"

"कोई बात नहीं भेड़ बनाओ न!" उसने जवाब दिया।

मुझे भेड़ बनाना आता नहीं था। मैंने वही चित्र बनाया जो आता था। मैं स्तब्ध रह गया जब वह बोला।

"नहीं, नहीं। मुझे अजगर के पेट में बंद हाथी नहीं चाहिए। अजगर खतरनाक होता है और हाथी बड़ा ही भारी भरकम। मेरे घर तो सब कुछ छोटा-छोटा सा है। मुझे भेड़ ही चाहिए।"

आखिर मैंने बनाया।

उसने ठीक से देखा और बोला, "यह तो अभी से बीमार है दूसरी बनाओ।"

मैंने फिर बनाया।

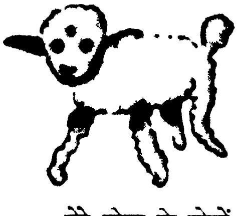

मेरे दोस्त के होठों पर एक हल्की सी सहानुभूतिपूर्ण हंसी खेल गई।

"देखो न!....यह भेड़ थोड़े ही है। यह तो भेड़ा है। इसके तो सींग हैं।"

मैंने फिर बनाया।

उसने फिर नहीं स्वीकारा।

"यह तो बूढ़ा है। बहुत दिन जीयेगा थोड़े।"

मुझे अपने जहाज़ की मोटर ठीक करनी थी। धीरज टूट गया। मैंने घसीट कर यह चित्र बनाया। और झिड़कता हुआ बोला "यह रहा बक्सा तुम्हारी भेड़ इसी के अंदर है।"

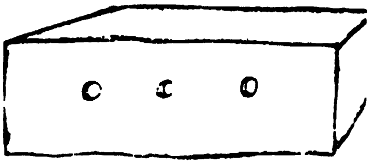

लेकिन मुझे थोड़ा अचरज हुआ अपने इस नन्हें से जज के मुंह पर एक चमक देख कर "मुझे बिल्कुल ऐसा ही चाहिए था। इसके लिए बहुत सी घास चाहिए क्या?"

"क्यों?"

"क्योंकि मेरा घर बहुत छोटा है।"

"उतना बहुत है। मैंने तुम्हें एक छोटी सी भेड़ दी है।"

उसने चित्र पर सिर झुकाया।

"इतनी छोटी थोड़े ही है......देखो? सो रही है।"

और यह थी मेरी पहली मुलाकात उस नन्हें राजकुमार से।

मुझे यह समझने में कई दिन लग गए कि आखिर वह नन्हा राजकुमार है कौन, कहां से आया है। वह मुझसे तो बहुत सारे सवाल पूछता था पर लगता था कि मेरी बिल्कुल नहीं सुनता। मुझे धीरे-धीरे उसकी ही बातों से सब कुछ पता चला। इस प्रकार जब उसने मेरा जहाज़ पहली बार देखा

(जहाज़ का चित्र बनाना मेरे वश की बात नहीं) तो पूछ बैठा, "यह क्या चीज़ है?"

"यह कोई चीज़ थोड़े ही है। यह उड़ती है। जहाज़ है जहाज़—मेरा जहाज़।"

मैंने बड़े गर्व से बताया कि, "मैं आकाश में उड़ सकता हूं।" मेरी बात सुनते ही वह चिल्ला पड़ा, "क्या कहा? तू आसमान से गिरा है!"

"हां", मैंने सकुचाते हुए कहा।

"यह तो बड़े मज़े की बात है।"

और वह खिलखिला कर हंसा। मुझे उसका हंसना बहुत खला। मन ही मन मैं चाहता हूं कि लोग मेरे दुख से दुखी हों। मेरी मनःस्थिति को बिना समझे वह बोला, "तू भी आसमान से आया है? तेरा घर किस ग्रह पर है?" उसकी रहस्यमय उपस्थिति मेरे समझ में आने लगी। मैंने पूछा, "तो तू किसी दूसरे ग्रह से आया है क्या?"

उसने जवाब नहीं दिया। मेरा जहाज़ देखता हुआ सर हिलाता रहा, "इस तरह तू इस जहाज़ पर कहीं बहुत दूर से नहीं आ सकता......"

और वह बड़ी देर तक कल्पना लोक में डूबा रहा। फिर जेब से भेड़ का चित्र निकाल कर उसे ऐसे निहारने लगा जैसे वह कोई खज़ाना हो।

ज़रा सोचिए इसकी बातों में किसी दूसरे ग्रह की चर्चा से मुझे कितना कौतूहल हुआ होगा। मैंने और भी जानना चाहा, "मेरे नन्हें राजकुमार! कहां से आया है तू? तेरा घर कहां है? तू मेरी भेड़ कहां ले जाना चाहता है?"

थोड़ी देर की तन्मयता के बाद वह बोला, "तूने मुझे जो बक्सा दिया है उसमें एक अच्छाई है—रात को वह मेरी भेड़ के लिए घर का काम देगा।"

"बिल्कुल ठीक! और यदि तू भला लड़का है तो मैं तुझे एक रस्सी और एक खूंटा भी दे दूंगा, उसे बांधने के लिए।"

बांधने की बात सुनकर वह हतप्रभ सा हो गया, "बांधने के लिए? अज़ीब बात है!"

"लेकिन अगर तूने उसे बांधा नहीं तो वह जहां मन करे चली जाएगी और खो जाएगी।"

मेरा नन्हा दोस्त फिर खिलखिलाया, "मगर जाएगी कहां?"

कहीं भी नाक की सीध में।

विषाद भरे स्वर में उसने कहा, "कोई बात नहीं। मेरा ग्रह बहुत छोटा है। वहां सीधे दूर तक नहीं जा सकता कोई।"

इस प्रकार मुझे दूसरी बात का पता चला कि वह जिस ग्रह से आया है वह मुश्किल से इतना बड़ा है जितना एक घर।

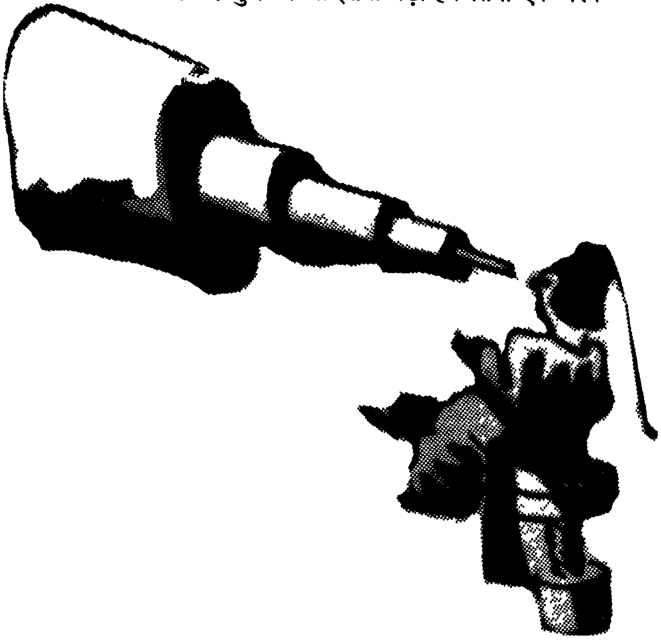

इससे मुझे बहुत आश्चर्य नहीं हुआ। मैं जानता था कि पृथ्वी, वृहस्पति, मंगल, शनि जैसे बड़े-बड़े ग्रहों के अलावा सैकड़ों ऐसे छोटे, बेनाम ग्रह हैं जिन्हें दूरबीन से भी देखने में कठिनाई होती है। जब कोई वैज्ञानिक किसी एक ग्रह की खोज करता है तो वह उसकी पहचान के लिए एक संख्या चुन लेता है, जैसे नक्षत्र 32611।

मेरे इस विश्वास के कई कारण हैं कि जिस नक्षत्र से वह आया था उसका नाम B612 होगा। उस नक्षत्र को केवल एक बार 1901 में एक तुर्क वैज्ञानिक ने अपनी दूरबीन से देखा था।

उसने एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में अपनी खोज का भव्य प्रदर्शन किया था। पर उसकी पोशाक देख कर उस पर किसी ने विश्वास नहीं किया। वयस्क लोग ऐसे ही होते हैं।

B612 के नक्षत्र अच्छे रहे होंगे क्योंकि तुर्की के एक तानाशाह ने, शायद इसी घटना के कारण, कानून बना दिया कि जो योरोपीय ढंग के कपड़े नहीं पहनेगा उसे मौत की सज़ा मिलेगी। उस वैज्ञानिक ने 1920 में फिर प्रदर्शन किया। इस बार उसने अपने को सूट-बूट से सजा रखा था और सबने उसकी बात मान ली थी।

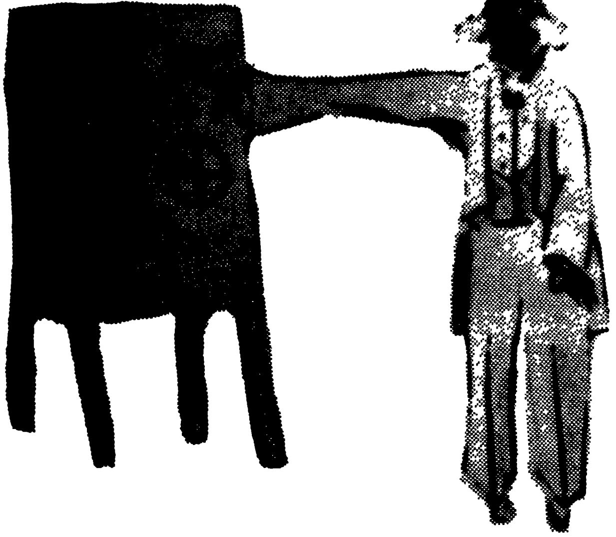

वयस्क लोगों के कारण ही मुझे उस नक्षत्र और उसकी संख्या के बारे में इतने विस्तार में बताना पड़ा। बड़े लोगों का संख्याओं में बड़ा विश्वास होता है। उनसे आप किसी नए दोस्त के बारे में बातें करें तो वे कभी कोई सार्थक प्रश्न नहीं पूछेंगे। वे कभी नहीं पूछेंगे, "उसकी आवाज़ कैसी है? कौन से खेल खेलता है? तितलियां इकट्ठा करता है?" पूछेंगे, "क्या उम्र है? उसके कितने भाई हैं? उसका वजन कितना है? उसके पिता कितनी तनख्वाह पाते हैं?" यही सब जानने में विश्वास होता है उनका। उनसे कहो, "मैंने गुलाबी ईंटों का एक मकान देखा है जिसकी खिड़कियों पर जोरानियम के फूल लगे हैं, छत पर कबूतर गुटुर-गूं करते हैं!" तो वे ऐसे घर की कल्पना भी नहीं कर पाएंगे। उनसे कहना चाहिए "मैंने एक लाख की कीमत वाला मकान देखा है।" झट बोलेंगे, "कितना सुंदर!"

इसी तरह अगर उनसे कहो "नन्हा राजकुमार बहुत आकर्षक था, हंसता था, एक भेड़ चाहता था" और यह उसके होने के लिए—उसके अस्तित्व को साबित करने के लिए काफी है—क्योंकि कोई होगा तभी तो भेड़ मांगेगा? तो ये लोग कंधा उचका कर तुम्हें बच्चा समझ लेंगे। लेकिन यदि यह कहा जाए कि जिस ग्रह से वह आया था उसका नाम B612 तो वह मान जाएंगे। और फिर कोई सवाल नहीं पूछेंगे। ऐसे होते हैं ये लोग, उनसे ऐसी ही उम्मीद रखनी चाहिए। बच्चों को बड़े लोगों के प्रति बड़े धैर्य से काम लेना पड़ता है।

ठीक ही तो है कि हम लोग, जिन्हें जीवन की समझदारी है, संख्याओं की परवाह नहीं करते। मुझे यह किस्सा परियों की कहानी की तरह शुरू करना चाहिए था। मुझे कहना चाहिए था, "एक था नन्हा राजकुमार जो एक ऐसे ग्रह में रहता था जो उससे थोड़ा ही बड़ा था। उसे एक दोस्त चाहिए था..........." जो लोग जीवन को समझते हैं उन्हें यह ज्यादा सच लगता।

मैं नहीं चाहता कोई मेरी किताब को हंसी में उड़ा दे। मुझे इन यादों को संजोने में कितना दुख हो रहा है। मेरे दोस्त को अपनी भेड़ लेकर गए छह साल हो चुके हैं और लिख इसलिए रहा हूं कि उसे भूलूं न। दोस्त को भूलना दुखदायी होता है, और सबके दोस्त नहीं होते। मैं भी वयस्कों की तरह हो सकता था—उन्हीं की तरह संख्याप्रिय। इसीलिए मैंने रंगीन पेन्सिलें खरीदी थीं। इस उम्र में चित्रकारी फिर से शुरू करना कठिन होता है। विशेषकर जब किसी ने छह साल की उम्र में बस अजगर के चित्र बनाए हों। फिर भी मैं यथासम्भव मिलती-जुलती तस्वीरें बनाने की कोशिश करूंगा। वैसे मुझे विश्वास नहीं कि मुझे पूर्ण सफलता मिल पाएगी। राजकुमार से संबंधित चित्र बनाता हूं तो एक ठीक बनता है तो दूसरा बिगड़ जाता है। माप गलत हो जाते हैं। एक जगह राजकुमार छोटा बन जाता है दूसरी जगह बड़ा। उसकी पोशाक के रंगों के बारे में भी हिचकता हूं। इस तरह अच्छे-बुरे चित्र बनाता, टटोलता सा आगे बढ़ता रहता हूं। मुझे लगता है कि विवरण संबंधी गलतियां हो ही जाएंगी क्योंकि मेरा दोस्त कभी पूरी बात नहीं बताता था। शायद वह मुझे अपने ही जैसा अक्लमंद समझता था। लेकिन क्या करूं मुझे उसकी तरह बक्से के अंदर भेड़ नहीं दिखाई देती। शायद मैं वयस्क की तरह हो गया हूं—निश्चित ही बड़ा हो रहा हूं।

(अगले अंक में जारी)

लेखक : सैंतेक्जूपेरी   अनुवाद : लालबहादुर वर्मा

सावनियां की हरी दुपहरी

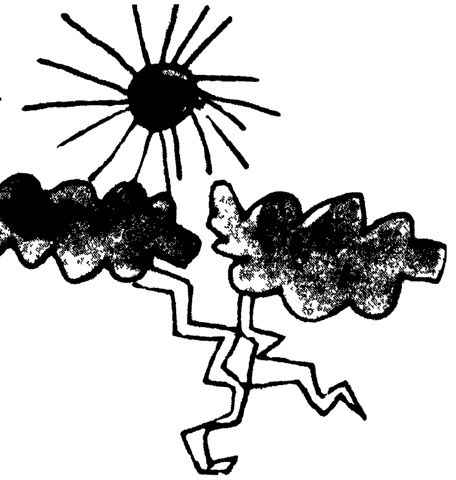

हलकी गहरी पीत सुनहरी,
कभी गर्म कभी शीत दुपहरी।
चांदी सोने सी मनहरी,
झिलझिल-झिलमिल करे दुपहरी।।

कभी धूप में बरखा बिखरी,
कभी धूप मेघों में निखरी।
भैया बादल के संग बिगरी,
कड़-कड़-तड़-तड़ चमके बिजरी।।

मुन्नू झटपट नाव बनाए,
फटफट नाली में तैराए।
चुनमुन-मुनमुन हंसी उड़ाए,
ताली पीटे शोर मचाए।।

जागी सोई सपन सहेली,
घड़ी दुपहरी की अलबेली।
करै चबैना गंगू तेली,
फाके सत्तू मंगू बेली।।

चित्र : अक्षत चराटे

मम्मी जी ने तली पकौड़ी,
आलू बेंगन प्याज मगौड़ी।
खुशबू पाकर हौड़ा हौड़ी,
बालक सेना भीतर दौड़ी।।

खट्टी मीठी चटनी बनाई,
अम्मा ताई मुंह भर लाई।
चाची ने चट प्लेट सजाई,
सबने मिलकर दावत खाई।।

बाग-बगीचे खिली दुपहरी,
ताल तलैया सजी दुपहरी।
मीठे गीतों भरी दुपहरी,
सावनियां की हरी दुपहरी।।

☐ कु. राजेश रस्तौगी

गुलेल का खेल

छठी कक्षा में पढ़ते समय मेरे तरह-तरह के सहपाठी थे। हरबंस नाम का लड़का हुआ करता था जिसके सब काम अनूठे हुआ करते थे। उसे जब सवाल समझ में नहीं आता तो स्याही की दवात उठाकर पी जाता। उसे किसी ने कह रखा था कि काली स्याही पीने से अक्ल तेज़ होती है। मास्टरजी गुस्सा होकर उस पर हाथ उठाते तो बेहद ऊंची आवाज़ में चिल्लाने लगता, "मार डाला! मास्टरजी ने मार डाला! इतनी ज़ोर से चिल्लाता कि आस-पास की जमातों के उस्ताद बाहर निकल आते कि क्या हुआ है। मास्टरजी ठिठककर हाथ नीचा कर लेते। यदि वह उसे पीटने लगते तो हरबंस सीधा उनसे चिपट जाता और ऊंची-ऊंची आवाज़ में कहने लगता, "अब की माफ कर दो जी! आप बादशाह हो जी! आप अकबर महान हो जी! आप सम्राट अशोक हो जी! आप माई-बाप हो जी, मेरे दादा हो जी, परदादा हो जी!"

क्लास में लड़के हंसने लगते और मास्टरजी झेंपकर उसे पीटना छोड़ देते। ऐसा था हरबंस। आए-दिन बाग में से मेंढक पकड़ लाता और कहता कि हाथ पर मेंढक की चर्बी लगा लें तो मास्टरजी के बेंत का कोई असर नहीं होता; हाथ को पता ही नहीं लगता कि बेंत पड़ा है।

एक दूसरा सहपाठी था—बोधराज। इससे हम सब डरते थे। वह चीउंटी काटता तो लगता जैसे सांप ने डस लिया है। बड़ा ज़ालिम लड़का था। गली की नाली पर जब बर्रे आकर बैठते तो नंगे हाथ से वह बर्रा पकड़कर उसका डंक निकाल लेता, और फिर बर्रे की टांग में धागा बांधकर उसे पतंग की तरह उड़ाने की कोशिश करता। बाग में जाते तो फूल पर बैठी तितली को लपककर पकड़ लेता, और दूसरे क्षण उंगलियों के बीच मसल डालता। अगर मसलता नहीं तो फड़फड़ाती तितली में पिन खोंसकर उसे अपनी कापी में टांक लेता।

उसके बारे में कहा जाता था कि अगर बोधराज को बिच्छू काट जाए तो स्वयं बिच्छू मर जाता है; बोधराज का खून इतना कड़वा है कि उसे कुछ भी महसूस नहीं होता। सारा वक्त उसके हाथ में गुलेल रहता, और उसका निशाना अचूक था। पक्षियों के घोंसलों पर तो उसकी विशेष कृपा रहती थी। पेड़ के नीचे खड़े होकर वह ऐसा निशाना बांधता कि दूसरे ही क्षण पक्षियों की चीं-चीं सुनाई देती और घोंसले में से तिनके

और थिगलियां टूट-टूटकर हवा में छितरने लगते। या वह झट से पेड़ पर चढ़ जाता और घोंसले में से अण्डे निकाल लाता। जब तक वह घोंसले को तोड़-फोड़ नहीं डाले उसे चैन नहीं मिलता था।

उसे कभी भी कोई ऐसा खेल नहीं सूझता था जिसमें किसी को कष्ट नहीं पहुंचाया गया हो। बोधराज की मां भी उसे राक्षस कहकर पुकारती थी। बोधराज जेब में तरह-तरह की चीज़ें उठाए घूमता, कभी मैना का बच्चा, या तरह-तरह के अण्डे, या कांटेदार झाऊ चूहा। उससे सभी छात्र डरते थे। किसी के साथ झगड़ा हो जाता तो बोधराज सीधा उसकी छाती में टक्कर मारता, या उसका हाथ काट खाता। स्कूल के बाद हम लोग तो अपने-अपने घरों को चले जाते, मगर बोधराज न जाने कहां घूमता रहता।

कभी-कभी वह हमें तरह-तरह के किस्से सुनाता। एक दिन कहने लगा :

'हमारे घर में एक 'गो' रहती है। जानते हो 'गो' क्या होती है?''

''नहीं तो, क्या होती है 'गो'?''

''गो सांप जैसा एक जानवर होता है। बालिश्त-भर लंबा, मगर उसके पैर होते हैं। सांप के पैर नहीं होते।''

हम सिहर उठे।

''हमारे घर में सीढ़ियों के नीचे 'गो' रहती है।'' बोला, "जिस चीज को वह अपने पंजों से पकड़ ले, वह उसे कभी भी नहीं छोड़ती। कुछ भी हो जाए, नहीं छोड़ती।''

हम फिर सिहर उठे।

''चोर अपने पास 'गो' को रखते हैं। वे दीवार फांदने के लिए 'गो' का इस्तेमाल करते हैं। वे 'गो' की एक टांग में रस्सी बांध देते हैं। फिर जिस दीवार को फांदना हो, रस्सी को झुलाकर दीवार के ऊपर की ओर फेंकते हैं। दीवार के साथ लगते ही 'गो' अपने पंजों से दीवार को पकड़ लेती है। उसका पंजा इतना मजबूत होता है कि फिर रस्सी को दस आदमी भी खींचें, तो 'गो' दीवार को नहीं छोड़ेगी। चोर उसी रस्सी के सहारे दीवार फांद जाते हैं।''

''फिर दीवार को तुम्हारी 'गो' छोड़ती कैसे है?'' मैंने पूछा।

''ऊपर पहुंचकर चोर उसे थोड़ा-सा दूध पिलाते हैं। दूध पीते ही 'गो' के पंजे ढीले पड़ जाते हैं।''

इसी तरह के किस्से बोधराज हमें सुनाता।

उन्हीं दिनों मेरे पिताजी की तरक्की हुई और हम लोग एक बड़े घर में जाकर रहने लगे। घर नहीं था, बंगला था, मगर पुराने ढंग का, और शहर के बाहर। फर्श ईंटों के, छतें ऊंची-ऊंची और ढालवां, कमरे बड़े-बड़े, लेकिन दीवारों में लगता जैसे गारा भरा हुआ है। बाहर खुली जमीन थी और पेड़-पौधे थे। घर तो अच्छा था मगर बड़ा खाली-खाली सा था और शहर से दूर होने के कारण मेरा दोस्त-यार भी यहां पर कोई नहीं था।

तभी वहां बोधराज आने लगा। शायद उसे मालूम हो गया था कि वहां शिकार अच्छा मिलेगा, क्योंकि उस पुराने घर में और घर के आंगन में अनेक पक्षियों के घोंसले थे, आस-पास बंदर घूमते थे, और घर के बाहर झाड़ियों में नेवलों के दो-एक बिल थे। घर के पिछले हिस्से में एक बड़ा कमरा था। जिसमें मां ने फालतू असबाब भरकर गोदाम सा बना दिया था। यहां पर कबूतरों का डेरा था। दिनभर वहां पर गुटरगूं-गुटरगूं चलती रहती। वहीं पर टूटे रोशनदान के पास

एक मैना का भी घोंसला था। कमरे के फर्श पर पंख और टूटे अण्डे और घोंसलों के तिनके बिखरे रहते

बोधराज आता तो मैं उसके साथ घूमने निकल जाता। एक बार वह झाऊ चूहा उठा लाया, जिसका काला थूथना और कंटीले बाल देखते ही मैं डर गया था। मां को मेरा बोधराज के साथ घूमना अच्छा नहीं लगता था, मगर वह जानती थी कि मैं अकेला घर में पड़ा-पड़ा क्या करूंगा। मां भी उसे राक्षस कहती थी और उसे बहुत समझाती थी कि गरीब जानवरों को तंग नहीं किया करे।

एक दिन मां मुझसे बोली, "अगर तुम्हारे दोस्त को घोंसले तोड़ने में ही मजा आता है तो उससे कहो कि हमारे गोदाम में से घोंसले साफ कर दे। चिड़ियों ने कमरे को बहुत गंदा कर रखा है।"

"मगर मां, तुम खुद ही तो कहती थीं : जो घोंसले तोड़ता है उसे पाप चढ़ता है।"

"मैं यह थोड़े ही कहती हूं कि पक्षियों को मारे। यह तो पक्षियों पर गुलेल चलाता है, उन्हें मारता है। घोंसला हटाना तो दूसरी बात है।"

चुनांचे जब बोधराज घर पर आया तो मैं घर का चक्कर लगाकर उसे पिछवाड़े की ओर गोदाम में ले गया। गोदाम पर ताला चढ़ा था। हम ताला खोलकर अंदर गए। शाम हो रही थी और गोदाम के अंदर झुटपुटा-सा छाया था। कमरे में पहुंचे तो मुझे लगा जैसे हम किसी जानवर की मांद में पहुंच गए हों। बला की बू थी, और फर्श पर बिखरे हुए पंख और पक्षियों की बीट।

सच पूछो तो मैं तो डर गया। मैंने सोचा, यहां भी बोधराज अपना घिनौना शिकार खेलेगा, यह घोंसलों को तोड़-तोड़कर गिराएगा, पक्षियों के पर नोचेगा, उनके अण्डे तोड़ेगा, ऐसी सभी बातें करेगा, जिनसे मेरा दिल दहलता था। न जाने मां ने क्यों कह दिया था कि इसे गोदाम में ले जाओ और इससे कहो कि गोदाम में से घोंसले साफ कर दे। मुझे तो इसके साथ खेलने को भी मना करती थी और अब कह दिया कि घोंसले तोड़ो।

मैंने बोधराज की ओर मुड़कर देखा तो उसने गुलेल संभाल ली थी, और बड़े चाव से छत के नीचे मैना के घोंसले की ओर देख रहा था। गोदाम की ढालवां छतें तिकोन-सा बनाती थीं। दो पल्ले ढालवां उतरते थे और नीचे एक लंबा शहतीर कमरे के आर-पार डाला गया था। इसी शहतीर पर, टूटे हुए रोशनदान के पास ही, एक बड़ा-सा घोंसला था, जिसमें से उभरे हुए तिनके, रूई के फाहे और लटकती थिगलियां हमें नजर आ रही थीं। यह मैना का घोंसला था। कबूतर अलग से, दूसरी ओर शहतीर पर गुटरगूं-गुटरगूं कर रहे थे और सारा वक्त शहतीर के ऊपर चहलकदमी कर रहे थे।

"घोंसले में मैना के बच्चे हैं," बोधराज ने कहा और अपनी गुलेल साध ली।

तभी मुझे घोंसले में से दो छोटे-छोटे बच्चों की पीली-पीली नन्ही चोंचें झांकती नज़र आईं।

"देखा?" बोधराज कह रहा था, "यह विलायती मैना है, इधर घोंसला नहीं बनाती। इनके मां-बाप ज़रूर अपने काफिले से बिछड़ गए होंगे और यहां आकर घोंसला बना लिया होगा।"

"इनके मां-बाप कहां हैं?" मैंने पूछा।

"चुग्गा लेने गए हैं। अभी आते ही होंगे," कहते हुए बोधराज ने गुलेल उठाई।

मैं उसे रोकना चाहता था कि घोंसले पर गुलेल नहीं चलाए, पर तभी बोधराज की गुलेल से फर्रर्रर की आवाज निकली और इसके बाद ज़ोर की टन् की आवाज़ आई। गुलेल का कंकड़ घोंसले से न लगकर सीधा छत पर जा लगा था जहां टीन की चादरें लगी थीं।

दोनों चोंच घोंसले के बीच गायब हो गईं। सकता-सा छा गया। लगता था मैना के बच्चे सहमकर चुप हो गए हैं।

तभी बोधराज ने गुलेल से एक और वार किया। अबकी कंकड़ शहतीर से लगा। बोधराज अपने अचूक निशाने पर बड़ा अकड़ा करता था। दो निशाने चूक जाने पर वह बौखला उठा। अबकी बार वह थोड़ी देर तक चुपचाप खड़ा रहा। जिस वक्त मैना के बच्चों ने अपनी चोंचें फिर से उठाईं और घोंसले के बाहर झांककर देखने लगे, उसी समय बोधराज ने तीसरा वार किया। अब की कंकड़ घोंसले के किनारे पर लगा। तीन-चार तिनके और रूई के गोले उड़े और छितरा-छितराकर फर्श की ओर उतरने लगे। लेकिन घोंसला गिरा नहीं।

बोधराज ने फिर से गुलेल तान ली थी। तभी कमरे में एक भयानक-सा साया डोल गया। हमने नज़र उठाकर देखा। रोशनदान में से आने-वाली रोशनी सहसा ढक गई थी। रोशनदान के सींखचे पर एक बड़ी-सी चील पर फैलाए बैठी थी। हम दोनों ठिठककर उसकी ओर देखने लगे। रोशनदान में बैठी चील भयावह-सी लग रही थी

"यह चील का घोंसला होगा। चील अपने घोंसले में लौटी है।" मैंने कहा।

"नहीं, चील का घोंसला यहां कैसे हो सकता है? चील अपना घोंसला पेड़ों पर बनाती है। यह मैना का घोंसला है।"

उसी वक्त घोंसले में चीं-चीं की ऊंची आवाज़ आने लगी। घोंसले में बैठे मैना के बच्चे पर फड़फड़ाने और चिल्लाने लगे।

हम दोनों निश्चेष्ट-से खड़े हो गए, यह देखने के लिए कि चील अब क्या करेगी। हम दोनों टकटकी बांधे चील की ओर देखे जा रहे थे।

चील रोशनदान में से अंदर आ गई। उसने अपने पर समेट लिए थे और रोशनदान पर से उतरकर गोदाम के आर-पार लगे शहतीर पर उतर आई थी। वह अपना छोटा-सा सिर हिलाती कभी दाएं, कभी बाएं देखने लगती। मैं चुप था, बोधराज भी चुप था, न जाने वह क्या सोच रहा था।

घोंसले में से बराबर चीं-चीं की आवाज आ रही थी, बल्कि पहले से कहीं ज्यादा बढ़ गई थी। मैना के बच्चे बुरी तरह डर गए जान पड़ते थे।

"यह यहां रोज आती होगी।" बोधराज बोला।

अब मेरी समझ में आया कि क्यों फर्श पर जगह-जगह पंख और मांस के लोथड़े बिखरे पड़े रहते हैं। ज़रूर आए-दिन चील घोंसले पर झपट्टा मारती होगी। मांस के टुकड़े और खून-सने पर इसी की चोंच से गिरते होंगे।

बोधराज अभी भी टकटकी बांधे चील की ओर देख रहा था।

अब चील धीरे-धीरे शहतीर पर चलती हुई घोंसले की ओर बढ़ने लगी थी और घोंसले में बैठे मैना के बच्चे पर फड़फड़ाने और चीखने लगे थे। जब से चील रोशनदान पर आकर बैठी थी, मैना के बच्चे चीखे जा रहे थे। बोधराज अभी भी मूर्तिवत खड़ा चील की ओर ताके जा रहा था।

मैं घबरा उठा। मैं मन में बार-बार कहता, क्या फर्क पड़ता है अगर चील मैना के बच्चों को मार डालती है या बोधराज अपनी गुलेल से उन्हें मार डालता है? अगर चील नहीं आती तो इस वक्त तक बोधराज ने मैना का घोंसला नोच भी डाला होता।

तभी बोधराज ने गुलेल उठाई और सीधा निशाना चील पर बांध दिया।

"चील को मत छेड़ो, वह तुम पर झपटेगी।"

मगर बोधराज ने नहीं सुना और गुलेल चला दी। चील को निशाना नहीं लगा। कंकड़ छत से टकराकर नीचे गिर पड़ा और चील ने अपने बड़े-बड़े पंख फैलाए और नीचे सिर किए घूरने लगी।

"चलो, यहां से निकल चलें," मैंने डरकर कहा।

"नहीं, हम चले गए तो चील बच्चों को खा जाएगी।"

उसके मुंह से यह वाक्य मुझे बड़ा अटपटा लगा। वह स्वयं ही तो घोंसला तोड़ने के लिए गुलेल उठा लाया था।

बोधराज ने एक और निशाना बांधा। मगर चील उस शहतीर पर से उड़ी और गोदाम के अंदर पर फैलाए तैरती हुई-सी आधा चक्कर काटकर फिर से शहतीर पर जा बैठी। घोंसले में बैठे बच्चे बराबर चीं-चीं किए जा रहे थे।

बोधराज ने झट-से गुलेल मुझे थमा दी और जेब में से पांच-सात कंकड़ निकालकर मेरी हथेली पर रखे।

"तुम चील पर गुलेल चलाओ। चलाते जाओ। उसे बैठने नहीं देना।" उसने कहा और स्वयं भागकर दीवार के साथ रखी मेज को घसीटकर फर्श के बीचोंबीच लाने लगा।

मैं गुलेल चलाना नहीं जानता था। दो-एक बार मैंने कंकड़ रखकर गुलेल चलाई, लेकिन इस बीच चील गोदाम के दूसरे शहतीर पर जा बैठी थी।

बोधराज मेज को घसीटता हुआ ऐन मैना के घोंसले के नीचे ले आया। फिर उसने मेज पर एक टूटी हुई कुर्सी चढ़ा दी, और फिर उछलकर मेज पर चढ़ गया और वहां से कुर्सी पर जा खड़ा हुआ। फिर बोधराज ने दोनों हाथ ऊपर को उठाए, जैसे-तैसे अपना संतुलन बनाए हुए उसने धीरे-से दोनों हाथों से घोंसले को शहतीर पर से उठा लिया और धीरे-धीरे कुर्सी पर से उतरकर मेज पर आ गया और फिर घोंसले को थामे ही थामे छलांग लगा दी।

"चलो, चलो, बाहर निकल चलो।" उसने कहा और दरवाजे की ओर लपका।

गोदाम में से निकलकर हम गराज में आ गए। गराज में एक ही बड़ा दरवाजा था, और दीवार में छोटा-सा एक झरोखा। यहां भी गराज के आर-पार लकड़ी का एक शहतीर लगा था।

"यहां पर चील नहीं पहुंच सकती,' बोधराज ने कहा और इधर-उधर देखकर घोंसले को एक टूटे बक्से पर चढ़कर शहतीर के ऊपर रख दिया।

थोड़ी देर में घोंसले में बैठे मैना के बच्चे चुप हो गए। बोधराज बक्से पर चढ़कर मैना के घोंसले में झांकने लगा। मैंने सोचा, अभी हाथ बढ़ाकर दोनों बच्चों को एक साथ उठा लेगा, जैसा वह अक्सर किया करता था, फिर भले ही उन्हें जेब में डालकर घूमता फिरे। मगर उसने ऐसा कुछ नहीं किया। वह देर तक घोंसले के अंदर झांकता रहा। फिर बोला :

"थोड़ा पानी लाओ, इन्हें प्यास लगी है। इनकी चोंच में बूंद-बूंद पानी डालेंगे।"

मैं बाहर गया और एक कटोरी में थोड़ा-सा पानी ले आया। दोनों नन्हे-नन्हे बच्चे चोंच ऊपर को उठाए हांफ रहे थे। बोधराज ने उनकी चोंच में बूंद-बूंद पानी डाला और बच्चों को छूने से मुझे मना कर दिया, न ही स्वयं उन्हें छुआ।

"इन बच्चों के मां-बाप यहां कैसे पहुंचेंगे?" मैंने पूछा।

"वे इस झरोखे में से आ जाएंगे। वे अपने आप इन्हें ढूंढ़ निकालेंगे।"

हम देर तक गराज में बैठे रहे। बोधराज देर तक मनसूबे बनाता रहा कि वह कैसे रोशनदान को बंद कर देगा, ताकि चील कभी गोदाम के अंदर न आ सके। उस शाम वह चील की ही बातें करता रहा।

दूसरे दिन जब बोधराज मेरे घर आया तो न तो उसके हाथ में गुलेल थी और न जेब में कंकड़, बल्कि जेब में बहुत-सा चुग्गा भरकर लाया था और हम दोनों देर तक मैना के बच्चों को चुग्गा डालते और उनके करतब देखते रहे थे।

☐ **भीष्म साहनी**

(लेखक के इसी नाम के संग्रह से साभार)

चित्र · अक्षत चराटे

शक्तिशाली प्रहार

कागज की पट्टी से दो छल्ले बनाओ। इनको पास-पास लटकाओ। छल्लों के बीच एक पतली सूखी लकड़ी रखो।

अब पैमाना (स्केल) लो और इसके सिरे से छल्लों पर रखी लकड़ी पर बीचों-बीच ज़ोर से प्रहार करो। देखो क्या होता है? लकड़ी टूट जाएगी, पर कागज़ के छल्ले नहीं टूटेंगे।

इसी तरह का एक और प्रयोग करो। दो पेंसिलों को एक मेज के किनारे पर इस तरह रखो कि उनका कुछ हिस्सा बाहर रहे। इन पेंसिलों पर सूखी पतली लकड़ी रखो। अब पहले वाले प्रयोग की तरह ही इस पर पैमाने के सिरे से प्रहार करो। लकडी टूट जाएगी पर पेंसिल नहीं गिरेंगी।

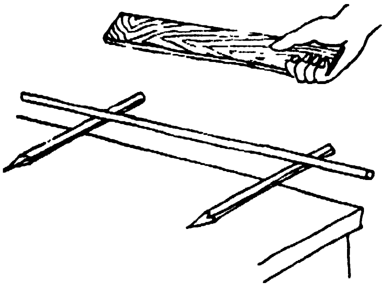

ऐसा क्यों होता है? यह तो स्पष्ट है ही कि लकड़ी कागज़ के छल्लों से अधिक मज़बूत है, फिर भी छल्ले नहीं टूटते। यह तभी संभव है जब हम लकड़ी पर ज़ोर और तेज़ी से प्रहार करते हैं। यदि प्रहार हल्का और धीमा हो तो छल्ले टूट जाएंगे पर लकड़ी नहीं टूटेगी।

दोनों स्थितियों में क्या अंतर है यह समझना ज़रूरी है। पहले हल्के प्रहार की बात करें। जब पैमाना और लकड़ी आपस में टकराते हैं तो टकराव के बिंदु पर छल्लों पर लटकी लकड़ी हिलती है। और प्रहार का असर इस बिंदु से दोनों ओर पूरी लकड़ी पर फैलता हुआ छल्लों तक पहुंचता है। चूंकि छल्ले सबसे कमजोर हैं, इसलिए टूट जाते हैं। ज़ोर से प्रहार करने पर प्रहार का असर पूरी लकड़ी पर नहीं फैल पाता, क्योंकि उसके लिए पर्याप्त समय नहीं है। छल्लों पर लटकी लकड़ी केवल टकराव के बिंदु पर हिलती है और इस प्रक्रिया में वह टूट जाती है।

क्या मार्च, 88 के अंक में दिए प्रयोगों और इनमें तुम्हें कोई संबंध दिखता है?

एक से दो

एक कार्ड शीट का टुकड़ा लो। उसमें आलपिन से एक छोटा छेद बनाओ। अब कार्डशीट को किसी प्रकाश के स्रोत के सामने रखो, जैसे बल्ब या खिड़की। अब अपनी बाईं आंख बंद करके दाईं आंख से छेद के पार देखो। कार्डशीट आंख से लगभग 10 सेंटीमीटर दूर होना चाहिए।

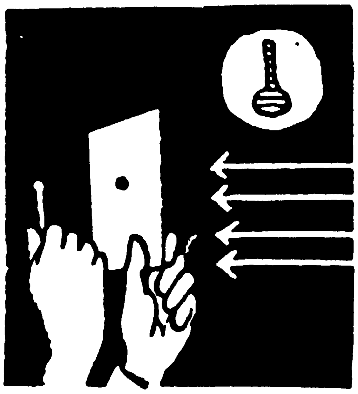

अब आंख और छेद के बीच आलपिन को रखो। आलपिन का सिर छेद की सीध में होना चाहिए। आलपिन को थोड़ा हिलाओ। क्या दिखता है? कार्डशीट के छेद के पीछे एक दूसरी आलपिन दिखेगी। परंतु यह आलपिन उल्टी होगी। अगर तुम आलपिन को बाईं तरफ खिसकाओगे तो तुम्हारी आंखें बताएंगी कि आलपिन दाहिनी ओर खिसकी है।

यह आलपिन कहां से आई? इस समय कार्डशीट का छेद प्रकाश का स्रोत है। इस छेद से आने वाले प्रकाश से आंख की पिछली दीवार पर प्रकाश का एक बिंदु बनता है। यह छेद का प्रतिबिंब है। परंतु छेद के प्रकाश के कारण बीच में रखी आलपिन की छाया भी आंखों की पुतली पर पड़ती है। इस छाया का प्रतिबिंब उल्टा नहीं बल्कि सीधा बनता है क्योंकि छाया पुतली के बहुत पास है। यह प्रतिबिंब छेद के प्रतिबिंब के बीचों बीच है। देखने की प्रक्रिया में हमारी आंखें सभी प्रतिबिंबों को उल्टाती हैं। इसलिए आलपिन का सीधा प्रतिबिंब उल्टा दिखता है। और वह भी छेद के पीछे, क्योंकि आलपिन का सिर्फ वही हिस्सा दिखता है जिस पर छेद का प्रकाश पड़ता है। ●

एक जमाना ऐसा भी था जब मनुष्य आसानी से आग उत्पन्न नहीं कर पाता था। सयाग से उसने सीखा कि दो सूखी लकड़ियों को आपस में रगड़ने पर इतनी उष्मा पैदा होती है कि घास फूस जल सकता है।

लकड़ी के एक तख्ते में एक छोटा सा गड्ढा बनाकर उसमें एक लंबी लकड़ी की नोक रखकर बरमे की तरह घुमाई जाए तो इससे भी आग सुलगाने के लिए पर्याप्त उष्मा पैदा होती है।

इसी तरीके में सुधार किया गया और बरमे वाली लकड़ी को एक साकेट में फिट करके उसे रस्सी द्वारा बढ़ई के बरमे की तरह चलाया जाता था। इसमें दो आदमी लगते थे। एक बरमा पकड़ता था तथा दूसरा रस्सी खींचता था।

कैसे बनी

तुमने चकमक के बारे में ज़रूर सुना होगा और शायद गांव-गांव में देखा भी होगा। हम इस पत्रिका की नहीं बल्कि चकमक पत्थर की बात कर रहे हैं। यह वही पत्थर है जो रेल पटरियों पर बिछी गिट्टियों में पाया जाता है। इसको लोहे की पट्टी (या दूसरे चकमक) से रगड़ने पर चिंगारी निकलती है। चिंगारी से कोई ज्वलनशील पदार्थ, जैसे रुई आदि को जलाकर आग को सुलगा सकते हैं। यही चकमक 19 वीं शताब्दी की शुरूआत तक यूरोपीय देशों में आग उत्पन्न करने के लिए प्रयुक्त किया जाता रहा। और शायद आज तक होता रहता यदि दियासलाई का आविष्कार नहीं होता।

दियासलाई की कहानी और पुरानी है। कहानी सन् 1680 से शुरू होती है जब एक अंग्रेज वैज्ञानिक रॉबर्ट बॉयल, ने फॉस्फोरस की 'खोज' की। हां, ये वही बॉयल हैं जिनके आयतन दबाव का नियम तुमने विज्ञान में पढ़ा ही होगा। फॉस्फोरस की खोज के बाद से ही दियासलाई बनाने की कोशिश शुरू हो गई थीं।

सुविधाजनक दियासलाई बनाने का सबसे पहला प्रयोग बॉयल के सहायक गॉडफ्री हॉकबिट्ज, ने किया था। उसने लकड़ी के छोटे-छोटे टुकड़े लिए और उनके एक सिरे को सल्फर के घोल में डुबोया। इसे फॉस्फोरस पर रगड़ने से आग उत्पन्न होती थी। पर कई खामियों के कारण इसका उपयोग बहुत सीमित रहा। एक तो यह महंगी विधि थी और दूसरे इसमें बहुत बदबू आती थी। परंतु प्रचलित न होने का मुख्य कारण फॉस्फोरस का उपयोग था, जो एक विषैला पदार्थ है।

सल्फर का उपयोग तब अधिक बढ़ गया जब उसे पोटास के क्लोरेट तथा शक्कर के साथ मिलाया गया। यह मिश्रण ज़्यादा ज्वलनशील साबित हुआ। कप्तान मेनबी नामक एक सैनिक ने इससे एक दियासलाई बनाई। पर यह आम उपयोग के लिए नहीं थी। इसका प्रयोग केवल सैनिक राकेट शस्त्र उड़ाने के लिए किया जाता था।

घरेलू उपयोग की दियासलाई सन् 1830 के बाद ही

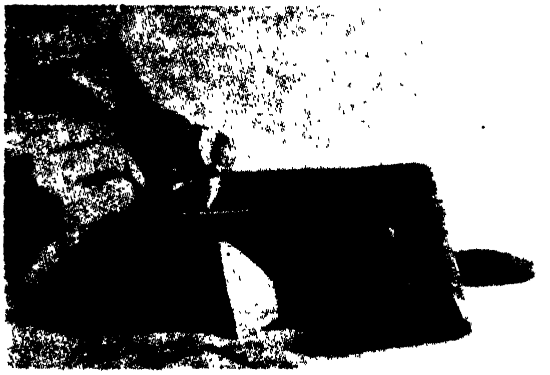

लोहा और इस्पात के आविष्कार के बाद आग सुलगाने के [illegible] में [illegible] आग सुलगाने का सामान एक लकड़ी की पेटी में रखा जाता था। इसमें एक चकमक पत्थर, लोहे का टुकड़ा और जलने वाली सामग्री (कपड़े का टुकड़ा या ज्वलनशील रुई) भी थी। चकमक को लोहे की पट्टी से मारने पर चिंगारी निकलती थी जो पेटी में रखी रुई को जलाती थी।

यह एक टिंडर बाक्स है जो पिस्तौल के आकार में बना है। पिस्तौल का घोड़ा खींचने पर चकमक का टुकड़ा लोहे की खड़ी पट्टी पर टकराता है इससे चिंगारी निकलती है। इस चिंगारी से सल्फर युक्त दियासलाई को जलाया जाता था।

फ्रांस के चासल नाम के व्यक्ति ने [illegible] एक दियासलाई बनाई। दियासलाई का [illegible] जमा रसायनों की शीशी में रखे अम्ल में [illegible] पर आग उत्पन्न होती थी।

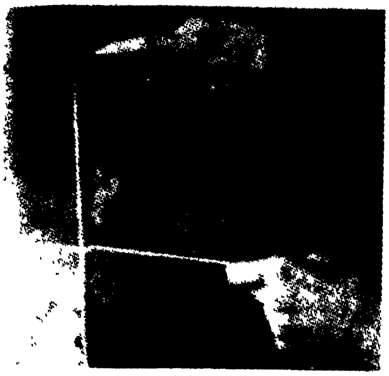

...न्नरित तरीका यहां दिखाया गया है जिसमे एक ही आदमी म... ...स तरीके मे रस्सी का दूसरा छोर एक धनुष की डोरी पर बंधा ...ही डोरी स्प्रिंग का काम करती थी और बरमे की रस्सी को वापस

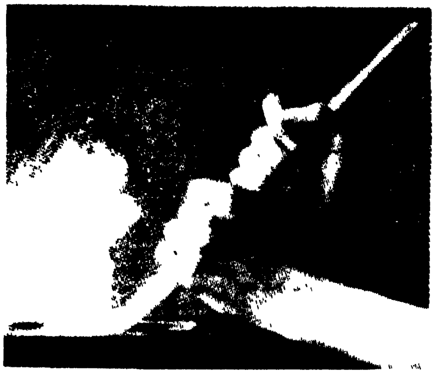

बांस के एक टुकड़े मे दरार बनाकर दरार मे दूसरे बास का टुकडा डालकर आरी की तरह आगे-पीछे चलाया जाता था। घर्षण से बास के छोटे-छोटे रेशो मे आग लग जाती थी।

आग सुलगाने के तरीको के विकास मे चकमक पत्थर की महत्वपूर्ण भूमिका है। दो चकमक पत्थरो को आपस मे रगडने पर चिगारियां उत्पन्न होती है जिससे घास मे आग लग सकती है।

...सलाई!

...मने आई। इसकी शुरूआत की रसायनों के एक विक्रेता, ...न्स ने, वह 'प्रोमीथियन' दियासलाई बनाकर बेचने लगा। ...ह दियासलाई कागज़ के टुकड़े को लपेटकर उसके एक सिरे ...र सल्फर का मिश्रण लगाकर बनाई जाती थी। दियासलाई ...एक पतली नली भी थी जो सल्फ्यूरिक अम्ल से भरी रहती ...ी। इस नली को प्लायर्स से तोड़ने पर अम्ल मिश्रण तक ...हुंचकर उसको जलाता था। प्लायर्स दियासलाई के साथ ही ...िकता था।

घर्षण से जलने वाली दियासलाई का एक और नमूना ...लूसीफर' दियासलाई थी जिसे 1826 में जॉन बेकर नामक ...क व्यक्ति ने बनाया था। बेकर ने एंटीमनी के सल्फाइड तथा ...टास के क्लोरेट का मिश्रण करके उससे पानी व गोंद में एक ...प बनाया। इस लेप को लकड़ी के टुकड़ों के सिरे पर ...गाया गया था। दियासलाई जलाने के लिए उसे रेगमाल ...ागज़ के दो टुकड़ों के बीच रखकर रगड़ना पड़ता था।

इसी लूसीफर दियासलाई से 'कांग्रेव' दियासलाई का विकास हुआ। कांग्रेव एक राकेट विशेषज्ञ था। इस दियासलाई में एंटीमनी के बदले फॉस्फोरस का उपयोग किया जाता था। शुरू में कांग्रेव दियासलाई एक शिलिंग प्रति डिबिया की दर से बिकती थी, पर अन्य देशों में प्रचलन होते ही उसका दाम घटकर आधा पेनी प्रति डिबिया हो गया। यानी दाम चौबीस गुणा घट गया।

आधुनिक सुरक्षित दियासलाई का आविष्कार सन् 1852 में स्वीडन में हुआ। इस दियासलाई में एमॉर्फस फॉस्फोरस का उपयोग किया जाता था जो कम खरतनाक है।

इन सबके अलावा कई विचित्र दियासलाईयों का विकास भी हुआ। उनमें से एक थी प्रकाश सिरिंज—जो हवा के ऊंचे दबाव तथा चकमक द्वारा जलाई जाती थी। वोल्टा नामक वैज्ञानिक (बेशक, वोल्ट शब्द उसी के नाम से बना है) ने बिजली तथा हाइड्रोजन की मदद से 'तुरंत प्रकाश' दियासलाई बनाई। डेवराइनर नामक व्यक्ति ने 1832 में हाइड्रोजन बत्ती का आविष्कार किया।

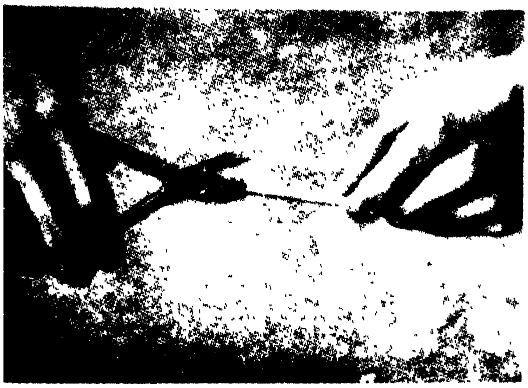

...' एक और किस्म की दियासलाई है। इसे कागज लपेटकर बनाया जाता था। कागज़ ...एक छोर पर कुछ रसायन डाले जाते थे। कागज़ के भीतर एक छोटी अम्ल भरी ...शी होती थी। प्लायर्स से शीशी तोड़ने पर अम्ल और रसायन की प्रतिक्रिया से आग ...न्न होती थी।

जॉन वाल्कर नामक एक अंग्रेज ने सुविधाजनक दियासलाई बनाई जिसको लूसीफर दियासलाई कहा गया। यह लगभग आज की दियासलाई जैसी ही थी। उसके रसायनयुक्त सिरे को रेगमाल कागज से रगड़ने पर आग उत्पन्न होती थी।

कुछ सुझाव

गिजुभाई की कलम से..

'माता-पिता से' पुस्तक में गिजुभाई ने जहां एक ओर घर में बालक के स्थान पर सवाल उठाए हैं, वहीं दूसरी ओर 'बालक घर में क्या करे?' इस पर रचनात्मक सुझाव भी दिए हैं। यहां हम मूल लेख का संपादित अंश प्रकाशित कर रहे हैं।

चकमक के विभिन्न अंकों में समय-समय पर 'खेल खेल में' जैसे स्तम्भों में जो सामग्री प्रकाशित होती है, वह एक दृष्टि से इससे भिन्न नहीं है।

बालक घर में क्या करे?

बालक के लिए घर कोई छोटी-मोटी दुनिया नहीं है। वहां उसके लायक कई काम मौजूद हैं। हमारा ध्यान उनकी तरफ गया नहीं, और हमने बालकों को वे काम सुझाए नहीं। बालक जब-जब भी खुद अपनी रुचि के काम खोज लेते हैं तब-तब हमने अनजाने में उनका विरोध किया है। उनके कई अच्छे कामों को दबा देने के लिए हमने उनको धमकाया भी है और सज़ा भी दी है। लेकिन अब इन बातों को हम भूल जाएं और नए सिरे से नया सिलसिला शुरू करें।

हम थोड़ी गहराई में जाकर देखेंगे तो हमको पता चलेगा कि बालक कुछ-न-कुछ करना चाहता है। हम कुछ अधिक समय तक खड़े रहकर बालक को काम करता देखेंगे तो हमको मालूम होगा कि वह जिस काम में लगा है, वह एक निश्चित काम है। उसके पीछे उसका कोई-न-कोई निश्चित हेतु रहता है। उस हेतु को सिद्ध करने के लिए उसके मन में एक कल्पना रहती है। अपनी छोटी किन्तु प्रबल क्रिया-शक्ति की सहायता से वह उस काम में सफल होने के लिए अथक परिश्रम कर रहा है। अपनी सृजनशील और कल्पनाशील बुद्धि के सहारे उसने अक्सर उपयोगी साधन और औजार भी खोज लिए हैं। अपने काम में वह असाधारण रूप से तल्लीन रहने लगा है।

इस तरह के काम ही बालकों के सच्चे काम हैं। इन कामों को देख-देखकर बालक की रुचि वाले कामों की एक सूची हमको तैयार कर लेनी चाहिए। बालक की रुचि के ऐसे काम हम उसको करने देंगे तो वह तुरन्त ही उनको करने लगेगा। उनमें वह तल्लीन हो जाएगा। उनको करके वह आनंद और सुख का अनुभव करेगा।

आजकल हमारे घरों में कभी-कदास ऐसे कुछ काम अचानक ही बालकों के हाथों में आ जाते हैं तो हाथ में चिराग लेकर खोजने पर भी हमको उनका पता नहीं चलता। लेकिन जब ऐसे कोई काम उन्हें नहीं मिलते तो बालक उकताकर इधर-उधर भटकते रहते हैं और जिसको हम हैरान करना कहते हैं, उस तरह वे हमको हैरान करते रहते हैं। बालकों के लिए हमको न तो कोई नए काम खोजने हैं और न खड़े ही करने हैं। जो उनकी रुचि के काम हैं, उन कामों की ही व्यवस्था हमको कर देनी है। दूसरा मतलब यह हुआ कि हम उन कामों के लिए ज़रूरी साधन जुटा दें और उन्हें करने के लिए एक जगह निश्चित कर दें, हम उनके काम में बाधक न बनें। हम न तो उनसे काम करवाएं और न उनके कामों का कोई प्रदर्शन ही करें। हम उनको अपनी रुचि के काम करने के लिए खुला छोड़ दें।

यहां ऐसे कुछ कामों की जानकारी दी जा रही है।

कागज़ और कैंची

बैठे-बैठे कागज़ काटने का काम बच्चों को अच्छा लगता । इस काम के साथ वे कैंची का उपयोग करना सीख जाते ह इससे उनकी उंगलियां और हाथ के स्नायु सुदृढ़ बनते । धीरे-धीरे वे निश्चित आकार काटने लगते काटने के मामले में उनकी पकड़ खूब बढ़ जाती है।

दूसरा काम कागज़ कोरने का है। कागज़ को दो तहा या चार तहा मोड़ कर उसको अगल-बगल से और बीच में

से काटने पर उसमें कुछ आकृतियां तैयार हो जाती हैं। बाद में जब कागज़ की तहों को खोला जाता है तो बढ़िया कारीगरी का एक नमूना सामने आता है। वैसे देखा जाए तो यह बढ़िया नमूना अचानक ही बन जाता है। मतलब यह है कि बालक पहले से इनकी कोई योजना बनाता नहीं। यह सब आकस्मिक होता है। परंतु ऐसी अनेकविध आकृतियों के नमूने डिज़ाइनों के सुंदर प्रदर्शन का काम करते हैं और इन डिज़ाइनों को देख-देखकर बालकों को नए-नए डिज़ाइन तैयार करने की दिशा सूझती है। ये डिज़ाइनें स्वयं ही कलाकृति का एक वातावरण बनाती हैं। आगे चलकर जब बालक इन आकृतियों के निर्माण-संबंधी नियमों को जान लेंगे तो वे योजनापूर्वक नई-नई आकृतियां भी तैयार कर सकेंगें। इन सब आकृतियों का एक संग्रह (अलबम) भी तैयार किया जा सकता है। इन सब आकृतियों को कोरे कागज़ पर चिपका कर रखा जा सकता है।

इसके अलावा कैंची की मदद से बालक घर में मौजूद बेकार अखबारों आदि में से चित्र काट सकता है। चित्रों में बॉर्डरों और तरह-तरह के अक्षरों का भी समावेश किया जा सकता है। इन सबको इकट्ठा करके बालक इनका एक संग्रह तैयार करे। हर महीने में ऐसे एक संग्रह की ज़िल्द बंधवा दी जाए तो बालक का अपना एक चित्र-संग्रहालय तैयार हो सकता है। इस काम के लिए बालक को कैंची, गौंद की एक कटोरी, दातौन का या दूसरा कोई ब्रुश, कागज़ और पत्र-पत्रिकाएं दे दी जाएं। इन्हीं के साथ कचरा डालने के लिए एक टोकरी और हाथ पोंछने के लिए कपड़े का एक टुकड़ा भी अवश्य दें।

लकड़ी की ईंटें और घन

ये साधन बहुत महत्व के हैं। लकड़ी की ईंटों और घनों की मदद से बालक मीनार, दीवार, घर, कुआं, बावड़ी, तालाब आदि स्थापत्य संबंधी नाना प्रकार के आकारों का निर्माण करता है। एक दीवार बनाते समय उसके कई-कई प्रकार तैयार करता है। इसके अलावा, ईंटों और घनों को ज़मीन पर जमा कर वह उनसे तरह-तरह की आकृतियां बनाता है।

चित्र देखना और चित्र बनाना

बालकों को लंबे समय तक व्यस्त रखने वाले कामों में चित्र देखने और चित्र बनाने के काम महत्व के हैं। इन चित्रों में बालकों को अच्छे लगने वाले विषयों के चित्र पसंद किए जाने चाहिए, जैसे—पशु-पक्षियों के, पतिंगों तितलियों के हाट-बाजार के और हमेशा पास-पड़ोस में घटनेवाली घटनाओं के चित्र आदि। माता-पिता चित्र खरीद न सकें तो वे इधर-उधर पड़े रहने वाले अखबारों और पत्र-पत्रिकाओं में छपे तरह-तरह के चित्रों के संग्रह तैयार कर सकते हैं। ये चित्र ठीक वैसे तो नहीं होते जैसे असल में होने चाहिए, लेकिन इनसे बालकों का काम चल सकता है। नहीं मामा से काना मामा कौन बुरा है। कुछ ऐसी ही बात इसमें भी है। चित्रों का संग्रह करने में हम अपनी दृष्टि को थोड़ा संवार लें तो हमको बहुत-कुछ मिल सकेगा। कहीं से रंग-बिरंगें आकार के तो कहीं से रंग-बिरंगे दृश्यों के चित्र मिल सकेंगे। विज्ञापनों वाले कागज़ों को काट कर भी चित्र इकट्ठा किए जा सकते हैं। अधिक अच्छा यह हो कि इन सब चित्रों के अलबम बनवा लिए जाएं।

हम अपनी हैसियत के हिसाब से चित्र इकट्ठा करें। लेकिन अपना सारा संग्रह बालकों को एक साथ न सौंपे। थोड़ा-थोड़ा दें। जैसे-जैसे रुचि बढ़ती जाए वैसे-वैसे देते रहें। बार-बार दें। बालक अलग-अलग समय में उनको अपनी अलग-अलग और नई-नई दृष्टि से देखेंगे।

जिस तरह चित्र देखना एक आनंददायक और विकासक काम है, उसी तरह चित्र बनाना भी वैसा ही काम है। बालक भी चित्र बना सकते हैं, लेकिन वे चित्र उनके अपने हिसाब के चित्र होंगे, बड़े चित्रकारों के हिसाब के हरगिज नहीं। लेकिन बच्चों के बनाए ये चित्र यदि उनको व्यस्त रखते हैं, उनको आनंद देते हैं, उनको एक कदम आगे बढ़ाते हैं तो वे उनकी बहुत मूल्यवान कृतियां ही हैं। अपने विकास की

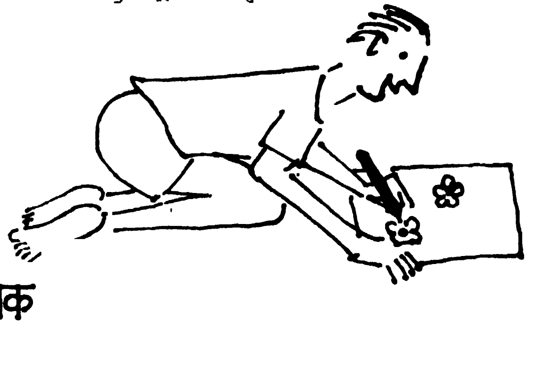

कक्षा में रहकर मनुष्य जैसा भी सृजन करता है, उसके लिए वही उसका अद्भुत और भव्य, सम्पूर्ण और सुंदर सृजन होता है। इस दृष्टि से बालकों द्वारा खींची गई लकीरें भी चित्र हैं। दो टेढ़ी-तिरछी लकीरों और कुछ बिन्दुओं की मदद से बालकों द्वारा बनाए गए कौए और गाय के चित्र भी चित्र ही हैं।

चित्र बनाने के लिए बालकों को एक काला तख्ता और अच्छी किस्म की सफ़ेद या रंगीन चॉक दीजिए। आगे चल कर उनको रंगीन पेंसिलें और कागज़ के टुकड़े दीजिए।

जहां चॉक, तख्ता, कागज़ या पेंसिल-जैसी कोई भी चीज़ न मिले, वहां बालकों को जरूर मौका दीजिए कि वे अपने आंगन की धूल में लकीरें खींच सकें और चित्र बना सकें। गांवों में धूल में लकीरें खींच कर तरह-तरह के चित्र बनाए जाते हैं।

बालकों को चित्र बनाने की सामग्री सौंप दीजिए। वे जैसे भी चित्र बनाएं, उनको बनाने दीजिए। उनकी गलती मत निकालिए। बनाए गए चित्रों को इकट्ठा करके पास-पड़ोस के चित्रकला-विद्यालय में या किसी शिक्षा-संस्था में भेजकर चित्रों पर उनकी सम्मति और सुझाव प्राप्त कीजिए। प्राप्त सुझावों को ध्यान में रखकर काम आगे बढ़ाइए।

मिट्टी के खिलौने

बालकों को मिट्टी के खिलौने बनाने की अनुमति दीजिए। बरसात के मौसम में गारा तैयार मिलता है। दूसरे मौसमों में बालक को खेत की, गली की या आंगन की मिट्टी के गारे का उपयोग करने दीजिए। थोड़ा खर्च करके इस काम के लिए सफेद या लाल-पीली मिट्टी का भी उपयोग किया जा सकता है।

जो लोग पैसे खर्च कर सकते हैं, वे इस काम के लिए 'क्ले' और 'प्लेस्टिसिन' नामक मिट्टियां मंगवा लें।

गारे से ईंटें बनाने का काम बालकों को सबसे पहले सुझाइए। बढ़ई से लकड़ी का एक सांचा तैयार कराया जा सकता है। जिन घरों के चारों ओर बड़ा अहाता हो, वहां बालक ईंटें बनाने का काम करें।

बालक जैसे भी खिलौने बनाएं, उनको बनाने दीजिए। वे तरह-तरह के आकार जरूर बनाएंगे। वे अपनी पसंद की चीजें बनाएंगे और वे गारे में कई चीज़ों के ठप्पे भी तैयार करेंगे।

बालकों द्वारा बनाए गए गारे के मामूली खिलौनों को हम सावधानी के साथ बाल-संग्रहालय में रखवा दें। मिट्टी का काम एक सृजनात्मक काम है। इस काम के कारण हाथों के

स्नायु विशेष रूप से विकसित होते हैं। हमको पता चलता रहता है कि बालक के अवलोकन के विषय क्या-क्या हैं। अपनी कृतियों और अपने खेतों के माध्यम से बालक अपनी मनोवृत्ति को प्रकट करते रहते हैं। इस काम में भी हम इसका अनुभव कर सकेंगे।

कपड़े के टुकड़े

खास तौर पर छोटे बच्चों को कपड़ों के छोटे-छोटे टुकड़े दे दिए जाएं तो रुमाल की तरह उनको तहते रहने का काम वे लंबे समय तक करते रहते हैं। इससे उनको उतना ही लाभ होता है, जितना हाथ से की जाने वाली दूसरी किसी क्रिया से होता है। कपड़ों के कुछ टुकड़े एक पेटी में या एक पोटली में रखकर बालक को दे दीजिए। कपड़े के ये टुकड़े रंग-बिरंगे हों तो और भी अच्छा हो। टुकड़े रुमाल के नाप के होने चाहिए। टुकड़े गंदे हरगिज न हों। गंदे होने पर उनको धो लेना चाहिए।

बागवानी

पेड़-पौधों की परवरिश का काम बालकों का अपना एक महत्व का काम है। वे छोटी उमर में अपने गमलों की

सार-संभाल रख सकते हैं। आंगन में क्यारियां बना दी जाएं तो बीज बोने से लेकर पौधों की परवरिश तक के सारे काम वे कर सकते हैं। वे बड़े पेड़ों को पानी पिला सकते हैं।

बालकों को पानी सींचने और मिट्टी खोदने के ऐसे साधन और औजार दिए जाएं, जिनका उपयोग वे सरलता से कर सकें। उनको घर के आंगन में थोड़ी खुली जगह दीजिए। गेहूं-जुवार के कुछ दाने और सुलभ हों तो फूल-पौधों के कुछ बीज दीजिए। उनको उनके ढंग से अपने बाग की रचना करने दीजिए। हम उनसे यह न कहें कि इस तरह से बोओगे तो बीज उगेंगे, नहीं तो नहीं उगेंगे। हम इस झंझट में पड़ें ही नहीं। हमारी दृष्टि से थोड़े बीज बरबाद भी हो जाएं तो हो जाने दें। बालकों को जैसे-जैसे अनुभव होता जाएगा, वैसे-वैसे इस काम में उनकी निगाह खुलती रहेगी। उनका बोया हुआ एक बीज भी उगेगा तो उनके लिए तो वह एक उत्सव ही बन जाएगा।

जब वे उत्साह के साथ इन कामों में लगे होंगे तो उनको इनमें मजा आएगा छोटे-छोटे हाथ छोटे-छोटे कामों को पूरी गंभीरता के साथ अपनी पूरी ताकत लगा कर, कर रहे होंगे। उनके चेहरों पर पसीने की बूंदें या सुर्खी दिखाई देगी वे एकाग्र और प्रसन्न होंगे। अपनी रुचि के किसी काम में तल्लीन हो जाने पर जैसे हम दिखाई पड़ते हैं, वैसे ही बालक भी दिखाई पड़ेंगे।

हम बालकों को शुरू में ही समझा दें कि उनको औजारों का उपयोग किस तरह करना है, उनको कहां रखना है, और व्यवस्था एवं स्वच्छता की दृष्टि से क्या-क्या, कैसे-कैसे करना है।

प्राणियों की परवरिश

बालकों के लिए यह एक बढ़िया काम है। हम जानते हैं कि बालक कुत्तों के और उनके पिल्लों के साथ खेलते हैं। हमारा अपना अनुभव भी है कि इस काम में बालकों को मज़ा आता है। कुतिया के पिल्लों, छोटे बच्चों, और अपने छोटे भाई-बहनों-जैसे अपने सब जीते-जागते मित्रों के लिए बालकों के मन में बड़ा प्यार होता है। वे उनको खिलाते हैं, पिलाते हैं, खेलाते हैं, अपनी छाती से लगाकर रखते हैं, उनको अपने साथ सुलाते हैं, उनके साथ हंसते-बोलते हैं, और उनके सुख से सुखी और उनके दुःख से दुखी होते हैं। बालकों की अपनी यह एक जीती-जागती दुनिया होती है। बालक इसी के साथ बढ़ते हैं। इसके बीच रहकर वे अपने प्रेम का विकास करते हैं। इन सबके परिचय से उनको कई तरह के अनुभव प्राप्त होते रहते हैं। बालक खुद इनको खिलाने-पिलाने में लगे रहते हैं। अपने विकास के लिए बालकों को ऐसा सजीव वातावरण अवश्य ही मिलना चाहिए।

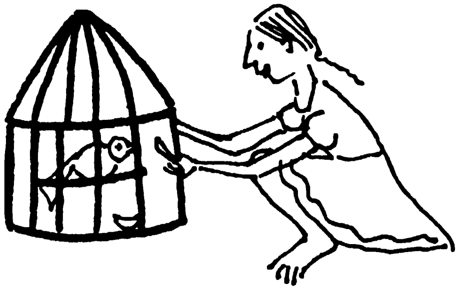

अगर हम बालकों को गायों, बछड़ों और बछड़ियों की दोस्ती का लाभ दे सकें तो प्राणी-परिचय की दृष्टि से वह एक सर्वोत्तम साधन बनेगा। इनके अभाव में हम कुत्ता या बिल्ली पालें। अगर घर में कोई पक्षी रखा जा सके तो और भी अच्छा हो। मतलब यह कि प्राणियों का परिचय बालक के लिए लाभदायक है और यह अपने-आप में एक बढ़िया काम भी है। इन प्राणियों की सार-संभाल में, इनको खिलाने-पिलाने में और इनके साथ जीने में बालकों का बहुत-सा समय बड़े मजे में बीतता है।

नाटक खेलना

बालकों को नाटक खेलना अच्छा लगता है! बालकों के नाटकों का मतलब है, जो कुछ भी देखा है उसको खेल के रूप में दिखाना। बहुत छोटे-छोटे बालक घर का खेल खेलते समय एक प्रकार का नाटक ही खेलते हैं।

बालकों ने जो नाटक खुद देखे होंगे, वैसे नाटक वे खेलना भी चाहेंगे। बाद में तो वे अपने पढ़े हुए नाटकों को भी खेलना चाहेंगे। हम उनको निर्दोष नाटक दिखाएंगे तो नाटक खेलने की उनकी वृत्ति का पोषण होगा। इस काम के लिए उनको अनुकूलता प्राप्त होगी।

नाटक घर या स्कूल में ही खेले जाएं। उनके लिए कोई नई चीज़ खरीदी न जाए। कोई खास व्यवस्था न की जाए। नाटक खेलने की इच्छा हो जाए तो नाटक शुरू कर दिया जाए। बालक खुद ही तय करें कि उनको कौन-सा नाटक खेलना है। नाटक का 'प्लाट', उसकी कथावस्तु, सबके ध्यान में रहती ही है। बालक नाटक के संवादों को कभी रट कर याद न करें। जब बालकों को पता चलेगा कि बिना रटे भी नाटक खेला जा सकता है तो उनको उसमें बहुत मज़ा आएगा। सारा सिरदर्द दूर हो जाएगा। नाटक के चलते 'टेबलो' की जो स्थिति बनती है, वह नहीं बनेगी। प्रॉम्पटर की और रिहर्सल की ज़रूरत नहीं रहेगी। जब जैसी ज़रूरत होगी, तब संगत-असंगत, कम-ज्यादा, जो भी सूझा, सो बोलकर काम निपटाने की और समय सूचकता से काम लेने की तैयारी रहेगी। नाटक के शब्दों की रटी हुई चौखट से बंध जाने के कारण अभिनय में जो रुकावट खड़ी होती है, वह नहीं होगी।

फूल और पत्तियां इकट्ठा करना

बालकों को खोजना, इकट्ठा करना और रखना-धरना अच्छा लगता है। इसका मतलब यह है कि बालकों में संग्रह और संचय की अच्छी वृत्ति रहती है। इस वृत्ति का अर्थ होता है 'म्यूज़ियम स्पिरिट'—वस्तु संचय की वृत्ति। बालक स्वयं अपने आसपास की दुनिया से और पदार्थों से जो ज्ञान प्राप्त करता है, उस ज्ञान को ज्यों का त्यों अपने सामने रखने के लिए वह वस्तुओं का संग्रह भी करता है। यह भी कहा जाता है कि इसके द्वारा बालक अपनी प्राथमिक स्थिति की परिग्रह वृत्ति की सद्गति या उच्च गति को व्यक्त करता है।

अपने आसपास की दुनिया को देखने और उसमें जो अच्छा लगे, उसको इकट्ठा करने के लिए बालकों को खुला छोड़ देना चाहिए। वे जो भी कुछ इकट्ठा करें हम उसका स्वागत करते रहें। उनके द्वारा इकट्ठी की गई चीज़ों में बकरी की मींगनी और कांच के टुकड़े भी होंगे। आज जिन चीज़ों को देखकर हमको हंसी आती है, अपने बचपन में हमने उन चीज़ों को टक लगा लगा कर देखा है। उनके स्वरूप को समझने के लिए हमने अपनी सब इन्द्रियों के साथ मेहनत की है। उन पर अपना समय खर्च करके उनके संबंध की जानकारी पा लेने के बाद ही आज हमने उनको बेकार मान लिया है। ज्यों-ज्यों आगे बढ़ते जाते हैं, त्यों-त्यों हमको निकम्मी लगनेवाली चीज़ों को हम पीछे छोड़ते जाते हैं। अपने इस निजी अनुभव पर भरोसा करके कि हमारे बाद आने वाले भी उनको निकम्मी लगने वाली चीज़ों को छोड़ते रहेंगे, हम बालकों को मौके दें कि वे अपनी रुचि की चीज़ों को खोजें और उनको इकट्ठा करें।

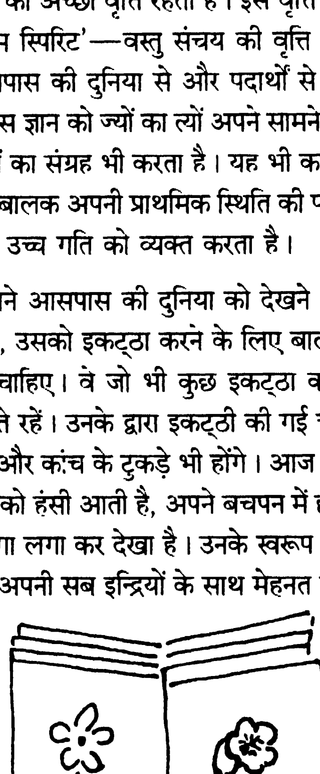

अपनी इकट्ठा की गई चीज़ों को अच्छी तरह सजाकर बालक अपनी कला-विषयक दृष्टि का विकास करेंगे। उनके द्वारा इकट्ठा की गई चीज़ों को संभालकर रखने की अनुकूलता हम अवश्य ही कर दें।

बालकों को हम ठीक से समझा दें कि फूलों और पत्तियां को किस तरह इकट्ठा किया जा सकता है और कैसे संभाल कर रखा जा सकता है। यदि बालक फूलों और पत्तियों को तोड़कर लाएंगे और उनको अपनी पुस्तकों में दबाकर रखेंगे तो इससे उनको वनस्पति का अच्छा परिचय होता रहेगा। आगे ये नमूने चित्र बनाने के काम में आ सकेंगे। सजावट के काम में भी इनका उपयोग किया जा सकेगा।

□ □ □

हर एक घर में ऐसे सब कामों की व्यवस्था करना आवश्यक नहीं है। सब घरों में सब काम करवाना संभव ही नहीं है। इसलिए साधन, सुविधा आदि का ध्यान रखकर जितने कामों की व्यवस्था सहज ही की जा सके, उतनों की की जाए!

घर में जिन कामों की व्यवस्था की गई है, उनमें से बालक किन कामों को अपनाता है, किन को नहीं अपनाता, कौन से काम उसे बहुत अच्छे लगते हैं, और कौन से बिलकुल नापसंद हैं, इसके अध्ययन से हम कुछ पता लगा सकेंगे कि बालक का रुझान किस तरफ है।

जो काम बालक को एकाग्र नहीं रख पाता, जिस काम से बालक का मन उकताने लगता है, जो काम बालक और बालक के बीच झगड़ा ही करवाता है, जो बार-बार की हमारी मदद के बिना चल ही न सकता हो, तो हम को समझ लेना चाहिए कि या तो बालक अभी उस काम के लायक नहीं है, या वह काम इस समय बालक के लिए उपयोगी नहीं है। ऐसा काम छोड़ देना चाहिए। वही काम सच्चा माना जाए जो बालक को व्यस्त रखे, प्रसन्न रखे, एकाग्र रखे, जिस को करते-करते बालक हंसे, गाए और दूसरे को उसमें सम्मिलित करना चाहे। ••

(मूल गुजराती से अनुवाद : काशिनाथ त्रिवेदी। माण्टेसरी बाल शिक्षण समिति, राजलदेसर के सौजन्य से)

अक्ल की खोज

भैया अक्ल कहां मिलती है?
परेशान हैं बहुत पिताजी,
मुझसे हैं हैरान गुरूजी
मुझे चिढ़ाते मेरे साथी
अक्ल नहीं है सब्जी भाजी
क्या गोली जैसे मिलती है?
भैया अक्ल कहां मिलती है?

सब कहते हैं अक्ल नहीं है।
क्या उसकी दुकान नहीं है।
सब कहते दिमाग में खोजो
चोर बाजारी अरे यही है।
तलुओं की चमड़ी हिलती है।
भैया अक्ल कहां मिलती है?

चित्र : शिवेन्द्र पांड्या, भोपाल

मेहनत होती टांय टांय फिस
थक जाने पर होती रिस
रिश्वत कितनी देनी पड़ती।
किसकी चलती यहां सिफारिश
सिर की यह दुनिया हिलती है
भैया अक्ल कहां मिलती है?

मीटर से क्या नापी जाती?
अंदाजन क्या आंकी जाती।
किसी तराजू पर तुलती क्या!
परमिट से क्या बांटी जाती!
सबको जो किस्मत मिलती है।
भैया अक्ल कहां मिलती है?

☐ **सविता शर्मा, छटवीं, सोहागपुर**

यदि गुरूजी हमें न मारते!

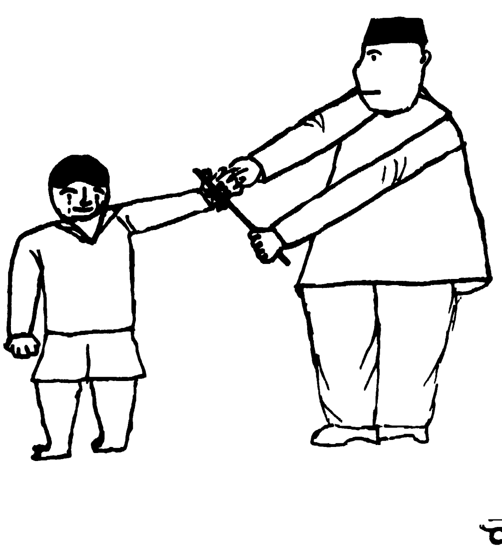

यदि गुरूजी हमें न मारते तो बहुत ही अच्छा होता। क्योंकि कैसी बुरी लगती है उनके हाथों की मार। हाय, हड्डी-हड्डी दुखती है रात को सो नहीं पाते हैं क्योंकि सारा शरीर दुखता है। वैसे गुरूजी हमें न मारते तो यह कहावत न होती, 'गुरूजी मारे धम धम, विद्या आए छम छम।'

यदि गुरूजी न मारें तो पांचों ऊंगलियां घी में, सिर शक्कर की चासनी में। फिर तो आधी छुट्टी में भागने वाले लड़कों को मज़ा हो जाता, क्योंकि उन्हें मार न पड़ती। अजी ज़नाब, कुछ लड़के तो इसी डर से नहीं भागते कि अगले दिन उनकी पिटाई होगी। मैं तो कहता हूं गुरूजी हमें न ही मारें तो अच्छा है।

☐ **महेन्द्र ठाकुर, आठवीं, पिपरिया**

यदि मनुष्य के पर होते!

एक दिन मैं अपने भाई के साथ बगीचे में घूम रही थी। मेरा छोटा भाई हाथ में बिस्किट लेकर खा रहा था। कि इतने में एक पक्षी जो कि पास ही एक पेड़ की डाली पर बैठा था वह अपने पंखों से उड़ता हुआ आया और मेरे भाई के हाथ से बिस्किट छुड़ाकर उड़ गया। मेरा भाई ज़ोर-ज़ोर से रोने लगा, और कहने लगा कि उस पक्षी से मेरा बिस्किट लाकर दो। पर मैं क्या करती यदि मेरे पंख होते तो मैं आकाश में उड़कर उस पक्षी को पकड़ लेती। ऐसे समय में मेरे पंख न होने के कारण मुझे बहुत बुरा लगा।

जब कभी में आकाश में हवाई-जहाज़ को उड़ता हुआ देखती हूं तो मेरी भी इच्छा आकाश में उड़ने की होती है। यदि मेरे पंख होते तो मैं सैकड़ों किलोमीटर की दूरी घंटों में पार कर लेती फिर न तो मुझे रेलगाड़ी, बस अथवा किसी दूसरे वाहनों की ज़रूरत होती और न ही मुझे पैसों के लिए साधन जुटाने पड़ते।

अभी आप पंखों से लाभ को देखते हुए लेख से बहुत खुश हुए पर कभी आपने यह भी सोचा कि आदमी के पंख नहीं हैं तब भी वह दुनिया में इतने अनाचार और अत्याचार कर रहा है। यदि उसके पंख होते तब न जाने क्या करता। मैं तो यही कहूंगी कि यदि मेरे पंख हों तो दूसरों के कल्याण एवं सुख देने वाले हों। जैसे मोर पक्षी अपने पंख फैलाकर नाचते हुए लोगों को खुश करता है। पर आज का मानव एक-दूसरे के पंख काटने में लगा है।

☐ **आरती शर्मा, छटवीं, सोहागपुर**

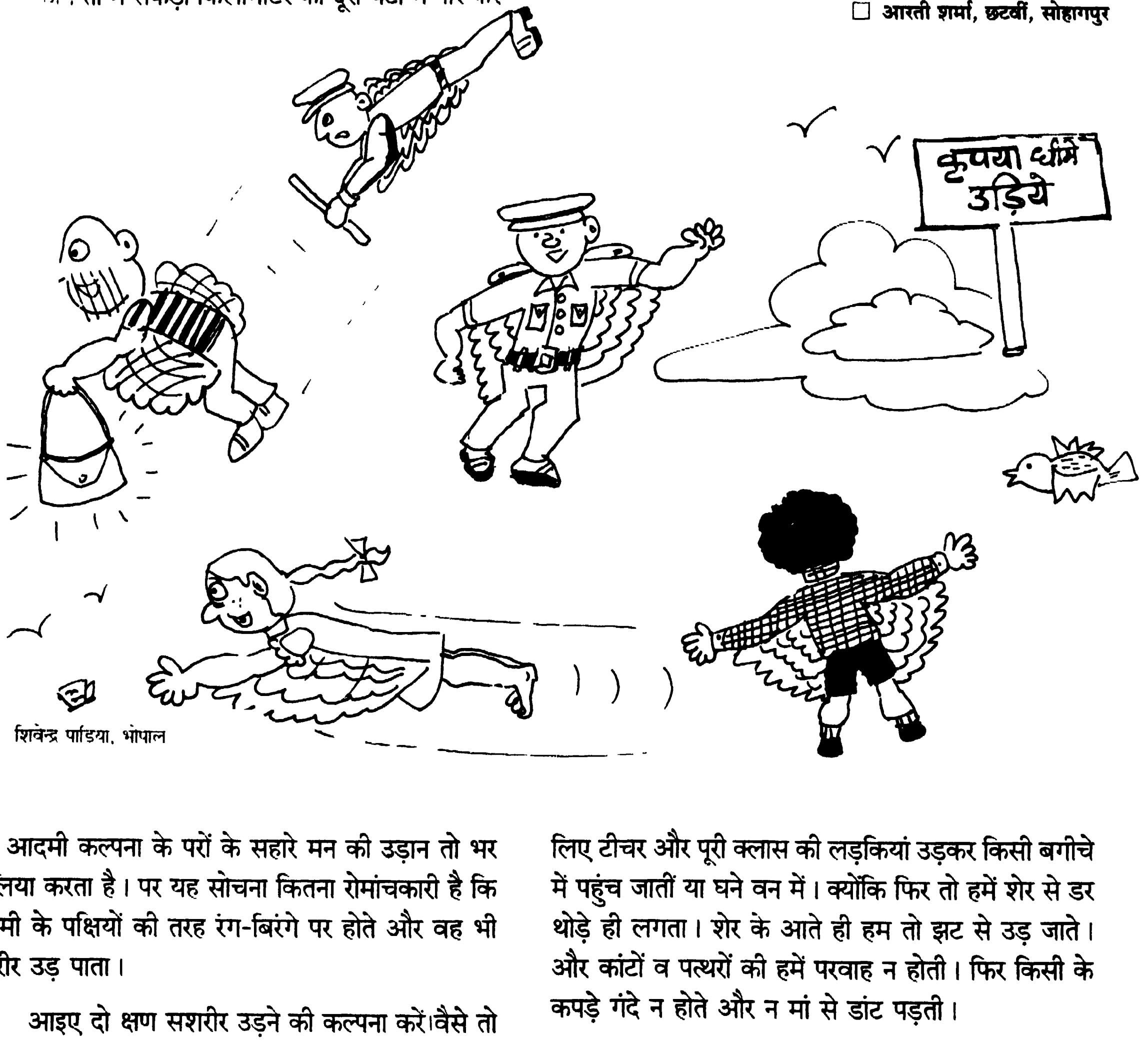

चित्र शिवेन्द्र पांडिया, भोपाल

वैसे आदमी कल्पना के परों के सहारे मन की उड़ान तो भर ही लिया करता है। पर यह सोचना कितना रोमांचकारी है कि आदमी के पक्षियों की तरह रंग-बिरंगे पर होते और वह भी सशरीर उड़ पाता।

आइए दो क्षण सशरीर उड़ने की कल्पना करें।वैसे तो सपने में आपने भी उड़ने का आनंद लिया होगा।

कभी-कभी यह भी होता कि पिकनिक मनाने के लिए टीचर और पूरी क्लास की लड़कियां उड़कर किसी बगीचे में पहुंच जातीं या घने वन में। क्योंकि फिर तो हमें शेर से डर थोड़े ही लगता। शेर के आते ही हम तो झट से उड़ जाते। और कांटों व पत्थरों की हमें परवाह न होती। फिर किसी के कपड़े गंदे न होते और न मां से डांट पड़ती।

फिर यह भी तो होता कि उड़ते हुए आदमी की जेब कोई जेबकतरा जब काट कर कहीं और उड़ जाता या नीचे

उतर जाता तो फिर पुलिस उसके पीछे उड़ती। शायद पुलिस बड़े-बड़े जाले बनवाती। उन्हें जेलों के ऊपर भी जाले लगवाने होते, क्योंकि ऊंची-ऊंची दीवारों के बाद भी कैदी उसमें से उड़ जाते।

उड़ते हुए व्यक्तियों में लड़ाई भी होती। ऊपर का शांत वातावरण जहां सिर्फ चिड़िया की चहचहाट व कोयल का मधुर संगीत सुनाई पड़ता है, लोगों के कोलाहल से भर जाता। उड़ना हमारा नित्य का कार्य होता। उड़ने की प्रतियोगिताएं होती। कभी-कभी प्रतियोगी गिर भी जाते।

और हां, हमारे पंखों को सहेज कर रखने की हिदायतें मिलतीं, बड़ों से। T.V. पर किसी ऐसे तेल क्रीम इत्यादि के विज्ञापन भी आते।

ऊपर भयंकर भीड़ में टक्करें होतीं। वहां भी कोई ट्रेफिक पुलिस वाला खड़ा किया जाता।

सूर्य-चंद्र को छूने की इच्छा से प्राणविहीन होकर गिरने वाले पक्षियों में मानव की संख्या सर्वाधिक होती।

ज़मीन पर जो भव्य इमारतें सुंदर उपवन, आज दिखाई देते हैं वे नहीं होते। शायद मनुष्य पेड़ों पर बसेरा करना पसंद करता।

इन सुंदर पक्षियों का क्या होता। बेचारों का जीवन कितना कष्टपूर्ण हो जाता, शायद इसीलिए मानव को प्रकृति ने पर नहीं दिए।

सशरीर उड़ने की बात सोच कर मन प्रफुल्लित हो उठता है। नीचे लहराते हरे-हरे खेत, ऊंची-ऊंची मीनारें देखने में कितनी अच्छी लगें। यहां केवल आपके या मेरे उड़ने की बात नहीं है, बल्कि समस्त मानव जाति के पर होते।

पंख युक्त मानव शरीर समाज की कल्पना करें। क्या हमें तीव्रगामी वायुयानों की ज़रूरत होती। ज़मीन पर बड़ी-बड़ी रेल-लाइन न बिछानी पड़ती। फिर मनुष्य को, विकास के अधिक अवसर प्राप्त होते। फिर कोई कार्य दुर्गम न रह पाता। ऊंचे-ऊंचे पहाड़, बड़ी-बड़ी नदियां, लंबे घने वन, सूखे-सूने मरूस्थल कोई मनुष्य का रास्ता न रोक पाते। बाढ़ से सुरक्षा, आग से बचाव करने के लिए किसी विशेष इंतजाम की आवश्यकता न होती। परंतु फिर आकाश में उड़ने वाले अन्य परिंदों की तो खैर न होती। क्योंकि आकाश में तो ऐसा कोई विशालकाय पक्षी तो उड़ता नहीं जो मनुष्य के लिए बाधक बनता। इक्के-दुक्के हैं भी तो मनुष्य उनका सफाया कर देता।

जो भी हो परंतु यदि मनुष्य के पर होते तो आज का युग इस स्थिति से सर्वथा भिन्न होता।

☐ सोनल शर्मा, नवमीं, सोहागपुर

यदि मैं मेंढक होती!

यदि प्रकृति ने मुझे मेंढक बनाया होता तो मैं उसका बड़ा आभार मानती। हमारी जाति के सदस्य संसार के हर कोने में पाए जाते हैं। यदि मैं मेंढक होती तो दिन के उजाले में किसी अंधेरे और ठंडे स्थान में छिपकर बैठती और अंधेरा होने का इंतजार करती। अंधेरा होते ही मैं फुदक-फुदक कर अपने भोजन की तलाश में बाहर निकल पड़ती। भोजन तलाशते समय मुझे अपने शत्रुओं से पूरी तरह सर्तक रहना पड़ता। मेरा सबसे बड़ा शत्रु सांप है। परंतु उससे भी अधिक खतरनाक शत्रु हैं नासमझ बच्चे। सांप के चुंगल से निकल भागना कहीं आसान है किंतु बच्चों के चुंगल में फंसकर तो मेरी सिट्टी-पिट्टी गुम हो जाती है। बच्चे जब मुझ पर चारों तरफ से पत्थरों की बौछार करते हैं तो मैं किसी तरह से अपनी जान बचाकर किसी नदी या तालाब में कूद जाती हूं।

पानी में तैरने में मुझे बड़ा मज़ा आता है। मैं संसार की सबसे कुशल तैराक हूं। लोग ओलम्पिक में स्वर्ण पदक जीतकर बड़ा घमंड करते हैं। यदि कहीं मुझे तैराकी में भाग लेने का मौका मिलता तो मैं विश्व तैराकी के सभी पिछले रिकार्ड तोड़ देती। मुझे जल और थल दोनों पर समान रूप से घूमने का अधिकार प्राप्त है।

आइए अब मैं आपको थल की सैर कराने के लिए ले चलती हूं। जल से बाहर निकलते ही मुझे धूप का स्पर्श बड़ा ही सुखद लगा। मैं एक चट्टान पर बैठ कर गुलाबी धूप का आनंद ले रही थी। तभी मेरे पीछे कुछ शोर सुनाई पड़ा। मैंने पीछे मुड़कर देखा कि मेरे पड़ोस के दो नटखट बच्चे हाथ में पत्थर लिए हुए आ रहे थे। मैं छलांग लगाकर चट्टान के पीछे छुप गई। बच्चे हाथ मलते रह गए। काश....मैं मेंढक होती।

☐ मधूलिका साहू, छटवीं, सोहागपुर

मवालीराम ने होशंगाबाद जिले में छात्र-छात्राओं के लिए एक लेखन प्रतियोगिता आयोजित की थी। इसमें कुछ विषय दिए गए थे। प्रतियोगिता में प्राप्त रचनाओं में से कुछ यहां प्रकाशित हैं।

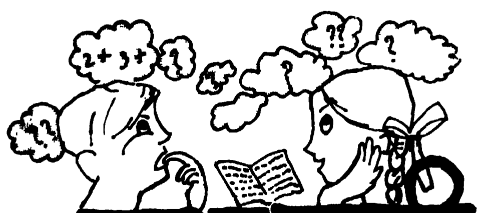

माथापच्ची

घसियारों की एक टोली को दो मैदानों का घास काटना था। एक मैदान दूसरे से दुगना बड़ा था। आधे दिन तक पूरी टोली बड़े मैदान का घास काटती रही। इसके बाद आधी टोली बड़े मैदान में ही काम करती रही और शाम तक उनका काम खत्म हो गया। बाकी आधी टोली छोटे मैदान की घास काटती रही, जिसमें शाम को इतना काम बचा, जिसे एक अकेला घसियारा दिन भर में पूरा कर सकता था। बताओ टोली में कितने घसियारे थे?

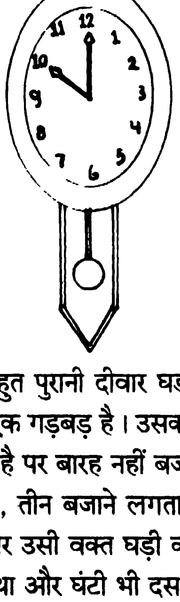

हरि के पास एक बहुत पुरानी दीवार घड़ी है जो यूं तो ठीक चलती है पर उसमें एक गड़बड़ है। उसका घंटा एक से ग्यारह तक तो ठीक बजता है पर बारह नहीं बजाता। ग्यारह के बाद वह फिर से एक, दो, तीन बजाने लगता है। मैं सोमवार को हरि के घर गया, और उसी वक्त घड़ी का घंटा बजने लगा। समय दस बजे का था और घंटी भी दस बार ही बजी। यानी समय और घंटी दोनों ही सही थे। बताओ, ऐसी स्थिति फिर कब आएगी?

मेरे पास एक घन सेंटीमीटर के कई सारे गुटके हैं। यदि मैं इन गुटकों की मदद से 8 घन सेंटीमीटर का बड़ा गुटका बनाना चाहता हूं तो मुझे आठ गुटकों की ज़रूरत पड़ेगी। ठीक है न! मैंने इससे भी बड़ा एक घन बनाया, इस घन में एक विशेषता है। जब मैं इस घन के सारे गुटकों को सटाकर जमीन पर रखता हूं तो एक चौकोर बनता है। बताओ, मैंने कितने गुटकों का उपयोग किया।

(1)

हम कितनी दूर देख सकते

सुब्बू के पास तीन ईंट हैं। प्रत्येक ईंट 10 सेंटीमीटर लंबी, 5 सेंटीमीटर चौड़ी और 2.5 सेंटीमीटर ऊंची है। बताओ, इन तीन ईंटों से भिन्न-भिन्न ऊंचाईयों के कितने आकार बनाए जा सकते हैं?

कोई सतह समतल है या नहीं यह देखने के लिए 'स्पिरिट लेवल' का उपयोग किया जाता है। रेल की पटरियों का तल देखने के लिए अक्सर इसका उपयोग किया जाता है। यह एक वक्रत पारदर्शी ट्यूब होती है जिसमें पानी भरा रहता है। पानी में हवा का एक बुलबुला भी रहता है। जब इस ट्यूब को सतह पर रखते हैं तब हवा का बुलबुला ठीक बीच में होना चाहिए, तभी सतह समतल मानी जाती है। यदि एक तरफ ढलान है तो बुलबुला विपरीत दिशा में सरकेगा। मेरे पास ऐसा ही एक स्पिरिट लेवल है। इसकी त्रिज्या 1 मीटर है। यदि मैं उसे ऐसी सतह पर रखता हूं जो एक तरफ 1/2 डिग्री झुकी है तो बताओ बुलबुला कहां होगा?

(7)

मेरे पास दो रेत घड़ी हैं। एक 7 मिनट चलती है और दूसरी 4 मिनट। इन दो घड़ियों के सहारे 10 मिनट की अवधि कैसे नापी जा सकती है?

(8)

अपने नए उत्पादन को बाजार में लाने से पहले कंपनी ने उपभोक्ताओं में सर्वेक्षण करने का फैसला किया। सेल्समैन सर्वेक्षण प्रपत्र लेकर एक घर में पहुंचा। संयोग से घर मालकिन गणितज्ञ थीं और पहेली प्रेमी भी। सेल्समैन ने उससे पूछा, "मैडम आपके घर में कितने लोग रहते हैं? और उनकी उम्र क्या है?"

मैडम ने जवाब दिया, "मेरी तीन बेटियां हैं जो मेरे साथ रहती हैं। उनकी उम्र का गुणनफल 36 है और उम्र का जोड़ बगल वाले घर के नंबर के बराबर है।"

सेल्समैन बगल वाले घर का नंबर देखकर लौटा और बोला, "मैडम, यह जानकारी पर्याप्त नहीं है।"

मैडम ने जवाब दिया, "मेरी बड़ी बेटी ऊपर कमरे में सो रही है।"

"शुक्रिया मैडम," सेल्समैन ने कहा, और सभी की उम्र लिख ली। बताओ उसने उम्र कैसे पता की?

(9)

मान लो तुम कुतुबमीनार देखने जाते हो और तुम्हारे पास केवल एक पोस्टकार्ड है। तुम इसकी मदद से मीनार की ऊंचाई कैसे ज्ञात करोगे?

(10)

एक बैठक में सभी सदस्यों ने आपस में हाथ मिलाए। किसी ने गिना कि 66 हाथमिलाई हुई। बैठक में कितने लोग थे?

(11)

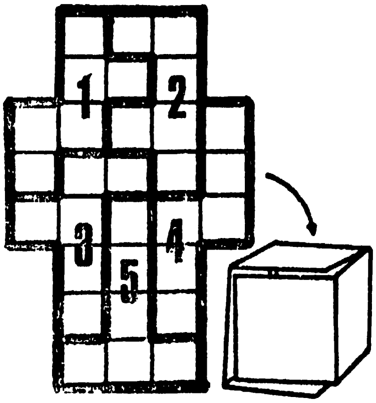

चित्र में दिए कार्डशीट के टुकड़े से 5 पासे (घन) बनाना है। कब्बू ने कोशिश की परंतु कहीं कुछ गड़बड़ है। वह केवल 4 पासे ही बना पा रहा है—नं. 1, 3, 4 और 5। पासा नं. 2 नहीं बन पा रहा है। क्या तुम कब्बू की मदद करोगे!

वर्ग पहेली : 10

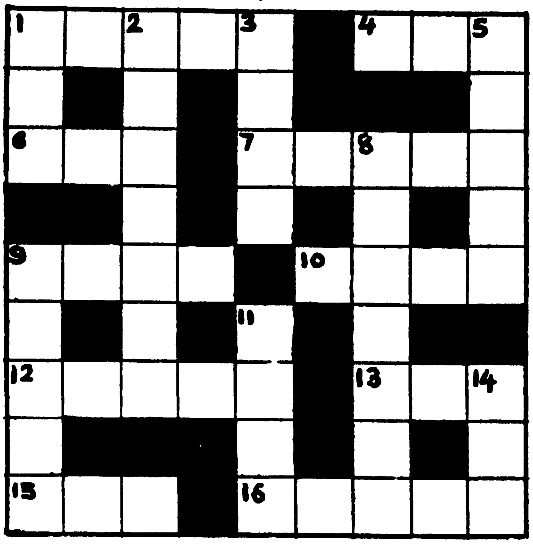

संकेत : बाएं से दाएं

1. विलीना लाश से विध्वंस (5)
4. ऊपर खटोले मे जांच (3)
6. वक्त (3)
7. गुर में आधी जान, उसके पहले ग्रह का नाम, अहसानमंद (5)
9. प्रकाशित
10. चार में लिया, केरल की एक प्रदूषित नदी
12. साग व भर गोलमाल दुनिया के लिए (5)
13. मात्र (3)
15. एक चर्चित टी.वी. सीरियल (3)
16. पैदाइशी (5)

संकेत : ऊपर से नीचे

1. सुखभोग के लिए आधा विलायती, आधा सगा (3)
2. चीरफाड़ से इलाज (7)
3. बनियों का नारा मुनाफा अच्छा (2, 2)
5. सावधान जिसके पास समाचार हो (5)
8. आम के आम... (4, 1, 2)
9. आग व भत गड़बड़ स्वागत सत्कार (5)
11. कसर ताजमहल में मुखिया (4)
14. लाठीधारी (3)

(12)

नटवरलाल ने चोरी का सारा माल एक तालाब के बीच स्थित द्वीप पर छिपा रखा था। द्वीप से तालाब के किनारे की दूरी 10 मीटर थी और वहां पानी भरा हुआ था। पुलिस नटवरलाल का पीछा करती हुई उस तालाब तक पहुंची। पुलिस वालों के पास दो बल्लियां थीं, परंतु दोनों की कुल लंबाई 9.5 मीटर है। बताओ, पुलिस द्वीप पर कैसे पहुंचे?

नारू की मार

बात आज से तीन वर्ष पहले की है, यानी 1985 के मई-जून की। धार जिले की कुक्षी तहसील के एक गांव गुराड़िया में नारू भयंकर रूप से फैला। अधिकांश गांव वासी नारू की चपेट में आ गए। गांव के किसान अपनी खेतीबाड़ी नहीं कर पा रहे थे और मज़दूर मजूरी। पूरे गांव का जन-जीवन जैसे ठप्प हो गया था। जिला प्रशासन तथा स्वास्थ्य विभाग ऐन मौके पर गांव में मदद के लिए पहुंचा।

आज भी ग्रामीण इलाकों में नारू रोग से पीड़ित कितने ही परिवार हैं जिनका इलाज तो दूर, उन्हें यह जानकारी भी नहीं है कि वे इससे कैसे बच सकते हैं या इसे फैलने से कैसे रोक सकते हैं। उनके हिस्से पड़ती है नारू से उत्पन्न पीड़ा की छटपटाहट और आर्थिक रूप से लगातार पिछड़ने का दुष्चक्र।

झाबुआ जिले में मेघनगर से लगभग 18-20 किलोमीटर दूर एक गांव है,भावपुरा। पिछले दिनों इस गांव में नारू के एक रोगी से मैं मिला। खेत की पगडंडी से होता हुआ उसके घर पहुंचा।

जयरामजी कहकर मैं उसके पास बैठ गया। उससे उम्र की जानकारी चाही तो बताया 50-55 साल के आसपास। भावपुरा में आदिवासी निवास करते हैं। प्रत्येक परिवार ने अपने खेत में ही घर बना रखा है। हालांकि परिवार के सारे सदस्यों का खेती से गुजारा नहीं होता है, क्योंकि केवल बरसात की फसल ही होती है। फिलहाल तो पिछले कुछ सालों से पर्याप्त बरसात न होने से हालत और खराब है। कुछ सदस्य मज़दूरी करते हैं। मज़दूरी जहां भी मिलती है कर लेते हैं।

नारू दूधिया पदार्थ छोड़ता है तथा उस अंग पर घाव हो जाता है

नारू से पीड़ित छितर।

छितर का एक लड़का राहत कार्य में पास के गांव में मज़दूरी कर रहा है। दूसरा लड़का किसी गांव के पटेल के यहां नौकर है। छोटे बच्चे ढोर चराने का काम करते हैं तथा फसल के समय निगरानी रखते हैं।

छितर की सारी बातें मैं ध्यान से सुन रहा था, लेकिन मेरी निगाह उसकी सीधी टांग पर घुटने के नीचे एक मैले-कुचैले कपड़े के पट्टे पर जमी हुई थी। पट्टा खून से तर हो रहा था। टांग पर सूजन भी दिख रही थी। मक्खियां भिनभिना रही थीं। बातचीत के दौरान छितर हाथों से मक्खियों को उड़ा लिया करता था। आखिर मेरे पूछने पर उसने अपने चेहरे पर दर्द भरी मुस्कान लाकर बताया कि यह नारू रोग है। छितर ढोर बांधने के खूंटे से अपनी पीठ टिकाते हुए बोला, 'मुझे यह चौथी बार नारू रोग हुआ है। इसे ग्रामीण आदिवासी लोग 'बाला रोग' भी कहते हैं।'

घाव पर बंधे पट्टे को खोलते हुए छितर ने कहा, 'ये तीन चार महीने तो बड़े ही दुख दायी गुजरेंगे। मैंने पूछा, 'इस रोग की शुरूआत में क्या होता है तथा इसके लक्षण क्या हैं?' छितर ने अपने अनुभवों के आधार पर बताया कि, 'शुरूआत में उस अंग में सूजन आ जाती है जिसमें नारू का कीड़ा होता है। नारू दो-तीन हाथ लंबा तथा सफेद रंग का होता है। सारे बदन में एकदम खुजली चलती है, बुखार आता है।' इसी बीच ज्वार के खेत में एक गाय घुस गई। छितर ने बच्चे को आवाज़ दी कि गाय को बाहर ले जाए। फिर बुदबुदाता हुआ बोला, 'क्या करूं नारू ने तो अपंग ही कर दिया है। ज्वार की फसल पक चुकी है। समय पर फसल नहीं कटेगी तो चिड़िया चुग जाएगी।' छितर फिर नारू रोग पर आ गया। बोला, 'नारू रोग होने पर उल्टियां खूब होती हैं, खाना-पीना भी छूट जाता है। ढेरों बीमारियां घर कर लेती हैं। सूजा हुआ स्थान लाल हो जाता है तथा फफोले पड़ जाते हैं। फफोले जब फूटते हैं तो दूधिया पानी निकलता है व जोरों की जलन होती है।' छितर पिछले एक महीने से नारू से पीड़ित है। अभी नारू बाहर नहीं निकला है, मांस में धंसा हुआ है।

छितर ने बताया न तो डॉक्टर इस इलाके में आते हैं और न हम ही किसी दवाखाने में जाकर इलाज करवाते हैं। मैंने छितर से पूछा, कि क्या वे जानते हैं कि नारू रोग कैसे होता है? इस पर छितर ने अपना सिर 'ना' में हिला दिया। तभी सामने से एक लड़की पानी भरकर लाती दिखी। वह छितर की लड़की थी। मैंने पूछा यह पानी कहां से लाते हो।

लड़कों ने सड़क के पार इशारा करते हुए कहा,'वहां एक कुआं है, वहीं का पानी पीते हैं।'

छितर से अपनी बातचीत समाप्त कर मैं कच्ची सड़क पार करके उस कुएं पर पहुंचा। कुआं एकदम कच्चा था। कुएं की मुंडेर एक के ऊपर एक जमे पत्थरों से बनी थी जिसे शायद गांव के लोगों ने ही बनाया था। कुएं में पानी काफी ऊपर तक भरा था यानी बिना रस्सी-बाल्टी के भी आसानी से निकाला जा सकता था। कुएं के किनारे पर ही हाथ-पैर धोने, नहाने तथा कपड़े साफ करने पर जो गंदा पानी निकलता वह भी उसी कुएं के पानी में दुबारा मिल जाता था। एक तरह से कुएं का पानी स्वास्थ के लिए लाभप्रद न था।

इसी गांव में एक ऐसे परिवार से भी मिला जिसके तीन सदस्य नारू रोग से पीड़ित थे। मैं उनके घर के नज़दीक पहुंचा तो उस परिवार की एक लड़की मुझ पर बरस पड़ी। अपनी आदिवासी भाषा में कहने लगी, 'तो तुम आए हो हमारे समाचार लेने के लिए। अभी पंद्रह-बीस दिन पहले ही तो कुछ लोग आए थे जीप में भरकर, हमारे दुख दूर करने। पर आज तक उनका पता नहीं है।'

झुमकी नाम की उस लड़की से मैंने पूछा कौन लोग आए थे। जवाब लड़की के भाई फूलसिंह ने दिया। बोला, 'झाबुआ से आए थे, पर वे तो सिर्फ हमें देखकर चले गए।' इनके पिता और परिवार के मुखिया भावसिंह चिलम का कश लेकर धुंआ छोड़ते हुए बोले, 'अब नारू रोग हो गया है तो कोई न कोई तो अपने घर के चक्कर लगाएगा ही। पर ये बड़े सरकारी लोग कोई हमारे दुख दर्द दूर करने के लिए थोड़े ही हैं। डॉक्टर यहां क्यों आने चले, शहर में उनकी अच्छी कमाई होती है। जब यहां हम ही भूखे मरते हैं तो हमारा इलाज करने पर उन्हें क्या मिलता!'

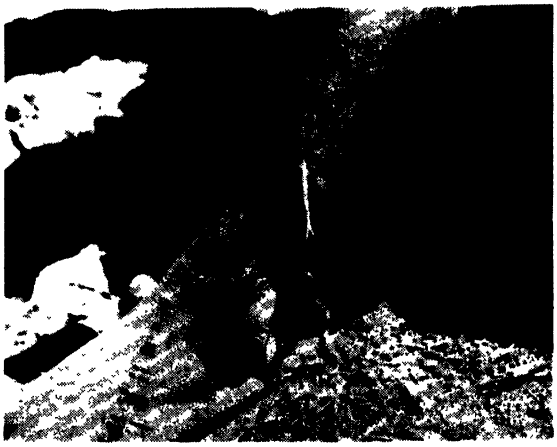

पैर से निकलता नारू कृमि छाया : विवेक

नारू : कहां, कितना!

नेशनल इंस्टीट्यूट आफ कम्युनिकेबल डिसीजेस ने अपने सर्वेक्षण में पाया कि भारत के सात राज्यों में मध्यप्रदेश भी है जहां नारू मिलता है। प्रदेशों में नारू रोग से पीड़ित लोगों की संख्या 1981 में निम्नानुसार थी—

प्रदेश	गांव	प्रभावित जनसंख्या
आन्ध्रप्रदेश	585	[illegible]
गुजरात	315	5,04,802
कर्नाटक	722	11,69,965
महाराष्ट्र	932	6,89,128
मध्यप्रदेश	2879	28,94,736
राजस्थान	3140	58,57,765
तमिलनाडु	9	10,048

संस्थान द्वारा 1982 में प्रस्तुत रपट के अनुसार मध्यप्रदेश के 20 जिलों में नारू पीड़ित पाए गए। जिलेवार स्थिति इस प्रकार थी—

जिला	विकास खंड	गांव	प्रभावित जनसंख्या
खरगोन	14	109	1,65,277
भोपाल	2	10	15,675
दमोह	3	5	4,858
देवास	6	35	1,38,514
धार	13	545	2,91,705
गुना	3	162	2,85,352
होशंगाबाद	4	14	18,998
इंदौर	3	25	68,375
झाबुआ	9	325	2,11,813
खंडवा	2	13	31,472
मंदसौर	5	62	1,42,418
राजगढ़	6	628	3,13,604
रतलाम	6	58	1,48,531
सागर	10	185	2,37,705
सीहोर	4	110	1,12,995
शाजापुर	7	394	3,02,785
शिवपुरी	3	24	14,527
टीकमगढ़	1	2	1,349
उज्जैन	6	110	2,42,626
विदिशा	6	63	1,32,456
कुल	113	2,879	28,94,736

(नेशनल इंस्टिट्यूट ऑफ कम्युनिकेबल डिसीजेस की 1982 की रिपोर्ट से)

शासकीय सूत्रों के अनुसार 1982 की इस स्थिति में परिवर्तन हुआ है। अब केवल 17 जिलों के 780 गांवों में नारू के रोगी पाए गए हैं।

(शेष [illegible])

कैसे होता है नारू

नारू एक पुराना रोग है। पर 1674 में इसका सही रूप सामने आया। यूनान के पुराने चित्रों में मनुष्य के शरीर से कीड़े को लकड़ी की सींक पर लपेटकर निकालते हुए दिखाया गया है। अंग्रेजी में इसे 'गिनीवर्म' कहा जाता है। यह रोग भारत, बर्मा, दक्षिण अमेरिका तथा अफ्रीका, वेस्टइंडीज, पाकिस्तान व तुर्कीस्तान में पाया जाता है। नारू गर्म इलाकों में तेज़ी से तथा खूब फैलता है।

नारू छूत का रोग नहीं है। यह पानी से फैलने वाली बीमारियों में से एक है। नारू आमतौर पर ग्रामीण इलाकों में ही देखा गया है। जबकि शहरी दुनिया इससे लगभग अछूती है।

नारू का कृमि बच्चों के पेट में पलने वाले गिडोंले या पटार (एस्केरिस) का रिश्तेदार है। यह परजीवी है। वयस्क

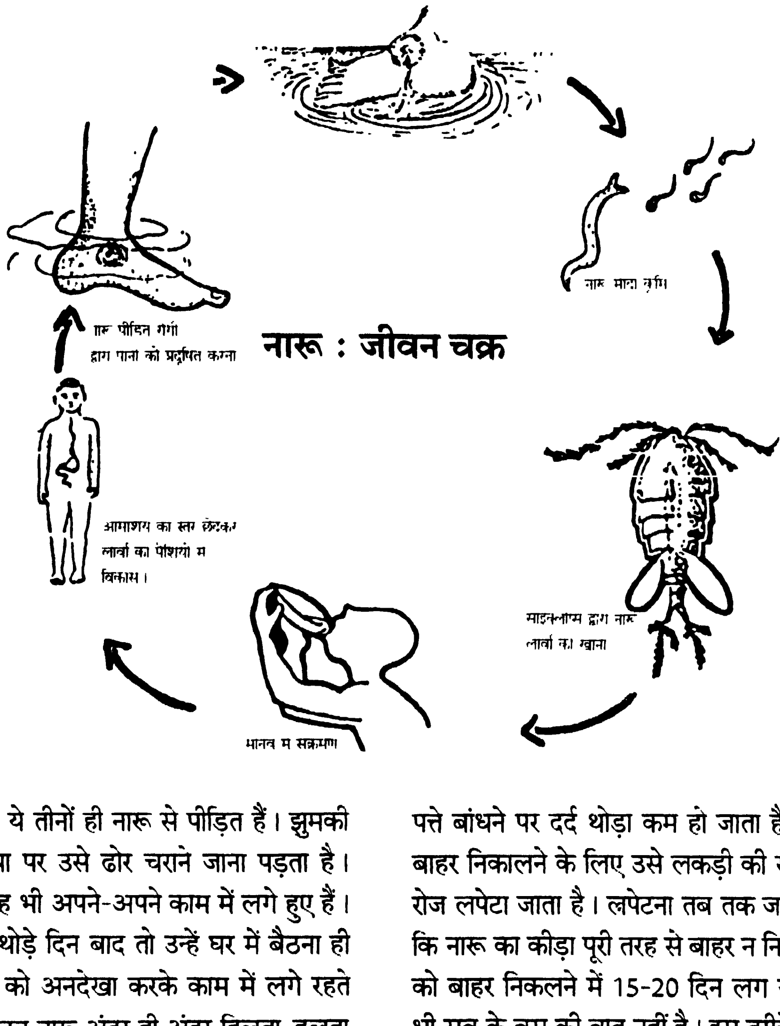

इस परिवार में ये तीनों ही नारू से पीड़ित हैं। झुमकी को बुखार आ रहा था पर उसे ढोर चराने जाना पड़ता है। भावसिंह तथा फूलसिंह भी अपने-अपने काम में लगे हुए हैं। उनका कहना था कि थोड़े दिन बाद तो उन्हें घर में बैठना ही पड़ेगा। अभी तो दर्द को अनदेखा करके काम में लगे रहते हैं। भावसिंह बोला, 'जब नारू अंदर ही अंदर हिलता-डुलता है तो बड़ा दर्द होता है।'

मैंने कहा आप नारू का इलाज दवाखाने जाकर क्यों नहीं करते! इस पर फूलसिंह बोला, 'दवाखाने जाने पर पूरा एक दिन खराब होता है। फिर डॉक्टर नारू का कीड़ा उसी समय तो बाहर निकालता नहीं है।' मैंने जानना चाहा कि वे कोई घरू इलाज करते हैं क्या! भावसिंह बोला, 'अकाव के पत्ते बांधने पर दर्द थोड़ा कम हो जाता है। नारू के कीड़े को बाहर निकालने के लिए उसे लकड़ी की सींक पर थोड़ा-थोड़ा रोज लपेटा जाता है। लपेटना तब तक जारी रखते हैं जब तक कि नारू का कीड़ा पूरी तरह से बाहर न निकल जाए। पूरे कीड़े को बाहर निकलने में 15-20 दिन लग जाते हैं। लेकिन यह भी सब के बस की बात नहीं है। इस तरीके से कीड़ा निकालने वाले कुछ लोग हैं जो पास के गांव में रहते हैं। इस काम के बदले में उन्हें पैसा या अनाज देना पड़ता है।'

झुमकी ने बताया कि,'यदि छालों पर पानी डाला जाता है तो बहुत ही अच्छा लगता है। जलन कम हो जाती है।' मैंने झुमकी से पूछा, 'क्या तुम कुएं से पानी लेने भी जाती हो?' झुमकी ने कहा,'हां, घर का पानी तो मुझे ही लाना पड़ता

मादा नारू कृमि की लंबाई 60-100 सेंटीमीटर होती है। जबकि नर कृमि मादा से 15-20 गुना छोटा होता है। ये दूधिया रंग के धागे के समान होते हैं। नारू रोग,मादा कृमि फैलाती है।

नारू अपना जीवन चक्र दो पोषकों में पूरा करता है। एक पोषक तो छितर, रामसिंह, भावसिंह जैसे यानी ज़मीन पर रहने वाले जीव-मनुष्य हैं। दूसरा पोषक जीव है - पानी में रहने वाला सूक्ष्म कीड़ा - साइक्लोप्स। इसे बोलचाल की भाषा में जलमक्खी कहा जाता है। जलमक्खी तालाब, बावड़ी, गड्ढे या पोखर में पाए जाने वाले जीवों में से एक है। पर इसे माइक्रोस्कोप जैसे उपकरण की सहायता के बिना नहीं देखा जा सकता।

मादा नारू कृमि त्वचा के नीचे आ जाने पर दूधिया तरल पदार्थ छोड़ती है। यह तरल चमड़ी पर फफोले पैदा करता है। इससे रोगी को बहुत अधिक जलन होती है। जलन शांत करने के लिए रोगी पानी के किसी स्रोत पर जाता है और पानी में अपने पीड़ित अंग को डुबाता या धोता है। इसी दौरान फफोला फूट जाता है और दूधिया तरल पदार्थ पानी मे मिल जाता है। तुम पूछोगे दूधिया पदार्थ के पानी में मिलने से क्या होता है? वास्तव में इसी दूधिया पदार्थ में मादा नारू द्वारा छोड़े गए असंख्य सूक्ष्म कीटाणु (लार्वा) होते हैं। ये कीटाणु जल्दी ही अपने दूसरे पोषक जीव अर्थात जलमक्खी को ढूंढ लेते हैं व उसमें प्रवेश कर जाते हैं।

ये कीटाणु बेलनाकार व कुंडलित होते हैं। इनमें नर तथा मादा दोनों ही होते हैं। एक जलमक्खी में 15-20 या कभी-कभी इससे भी अधिक कीटाणु अपना घर बनाते हैं। ये कीटाणु जलमक्खी के शरीर में पलते रहते हैं। यहां इनके शरीर में थोड़ा बहुत परिवर्तन होता है। आकार में वृद्धि हो जाती है।

बच्चा, जवान या वृद्ध कोई भी व्यक्ति जब ऐसे स्रोत का पानी पीता है जिसमें नारू के कीटाणु वाली जलमक्खी हो तो बस समझो नारू का प्रवेश हो गया। पानी के साथ आहारनाल में जलमक्खी पहुंचती है। आहारनाल में जलमक्खी तो पच जाती है किंतु नारू के कीटाणु बचे रहते हैं। तुम शायद आश्चर्य कर रहे होगे कि हम जो कुछ खाते हैं वह सब पच जाता है। जलमक्खी भी पच जाती है। फिर ये नारू के कीटाणु किस खेत की मूली हैं जो बचे रहते हैं। वास्तव में उनके शरीर पर एक ऐसी परत चढ़ी रहती है जिस पर पाचक रसों का कोई असर नहीं होता है।

नारू के कीटाणु आहारनाल की दीवार को भेदकर रक्त की नलियों से होते हुए आसपास की पेशियों वाले हिस्सों में चले जाते हैं। यहां लिंग के मुताबिक नर और मादा भी बन जाते हैं। इसके बाद नर कृमि की मौत हो जाती है। मादा कृमि बची रहती है। अब मादा नारू कृमि शरीर के ऐसे अंगों में जाती है जो पानी के संपर्क में आते हैं जैसे हाथ, पैर। वैसे तो यह शरीर के किसी भी अंग में जा सकती है।

मादा कृमि जिस अंग में भी पहुंचती है वहां पेशियों में अपनी जगह बना लेती है। कुछ समय बाद त्वचा के नीचे आ जाती है। और फिर शरीर से बाहर। इस तरह नारू का चक्र चलता रहता है।

नारू का जीवन 12 से 14 माह होता है। जिसमें 2 से 6 सप्ताह जलमक्खी में होता है। नारू के कीटाणु जब वृद्धि करके त्वचा के नीचे आते हैं तब पता चलता है कि नारू रोग हो गया है। ●

मैंने कहा, 'फिर तो तुम ज़रूर अपने हाथ-पैर कुएं पर ही धोती होगी।' उसने अपना सिर 'हां' में हिला दिया।

मैं यही सोच रहा था कि नारू से पीड़ित व्यक्ति पानी के पास जाकर नहाते होंगे या अपने पीड़ित अंग को पानी में डुबोते होंगे। ऐसे में ही तो नारू रोग के कीटाणु पानी में मिल जाते हैं। मैंने झुमकी से कहा, 'तुम्हें ऐसा नहीं करना चाहिए। ऐसे में तुम नारू रोग को अन्य व्यक्तियों तक पहुंचा रही हो।' झुमकी मेरे हाव-भाव से यह ज़रूर समझ गई कि वह कुछ गलत कर रही है। लेकिन वह यह समझना चाहती थी कि नारू किस तरह फैलता है। मैंने झुमकी को समझाने का प्रयास किया 'यदि नारू से पीड़ित व्यक्ति पानी में हाथ-पैर डुबाता है या नहाता है तो फफोले के फूटने से नारू के कीटाणु पानी में मिल जाते हैं। जब यह पानी कोई अन्य व्यक्ति पीता है तो उसे भी यह रोग हो जाता है।' भावसिंह ने कहा, 'क्या करें, घर के सभी छोटे से बड़े को कुछ न कुछ काम तो करना ही

छाया : विवेक

लक्षण, उपचार तथा रोकथाम

नारू एक ऐसा रोग है जिसका कोई इलाज नहीं है सिवाए इसके कि इसे फैलने से रोका जाए। चूंकि इस रोग में मौत नहीं होती है इसलिए न तो स्वास्थ्य विभाग चिंता करता है और न ही वे लोग जो इससे पीड़ित होते हैं।

रोग लक्षण

1. शरीर के जिस भाग से नारू कृमि बाहर निकलने वाला होता है उस स्थान पर खुजली चलती है तथा चमड़ी पर फफोला हो जाता है।
2. कृमि निकलने के पूर्व, रोगी को हल्का बुखार आने लगता है तथा कभी-कभी शरीर पर चकत्ते पड़ने लगते हैं।
3. उल्टी दस्त की संभावना भी रहती है।
4. नारू कृमि फफोले में से आधे या चौथाई इंच व्यास का छेद बनाकर बाहर आता है। फफोले से सफेद या हल्के पीले रंग का कीटाणु युक्त तरल पदार्थ निकलता है। इसी तरल के साथ मादा नारू के असंख्य भ्रूण बाहर निकलते हैं।

उपचार

नारू रोग का उपचार, पीड़ित रोगी के शरीर से नारू कृमि को बाहर निकाल देना मात्र ही है। नारू रोग हो जाने पर कुछ सावधानी रखना आवश्यक है।

1. फफोलों पर ठंडा पानी डालने व प्रभावित अंग की मालिश करने से कीड़ा धीरे-धीरे बाहर आता है। कीड़े के बाहर निकले हुए भाग को किसी धागे, तिनके अथवा स्वच्छ कपड़े से बांध दें। इसमें सावधानी की ज़रूरत है यदि कृमि बीच में ही टूट जाए तो तकलीफ और भी बढ़ सकती है। आगे चलकर जलोदर और गठिया जैसी बीमारियां हो सकती हैं।
2. पीड़ित अंग में फफोले के फूटने से जो घाव बनता है उसमें पस पड़ सकता है। धूल-मिट्टी के लगने से टिटेनस की बीमारी हो सकती है। अतः नारू रोगी को ए टी एस का टीका लगवा लेना चाहिए।
3. आवश्यकता पड़ने पर डाक्टर की सलाह से कुछ दवाएं ली जा सकती हैं जिनसे नारू कृमि बेहोश हो जाते हैं, इससे ये शरीर से जल्द बाहर निकलते हैं। दर्द में भी थोड़ी राहत महसूस होती है।
4. डाक्टर द्वारा प्रभावित भाग को सुन्न करके चीरा लगाकर नारू कृमि को बाहर निकलवाया जा सकता है।

रोकथाम

नारू से बचने के तरीके हैं। सबसे अच्छा तरीका है पीने के लिए साफ पानी का उपयोग किया जाए।

यदि किसी व्यक्ति को नारू रोग हो गया है तो उसे पानी के स्रोत के पास जाने से रोका जाए। उसे समझाया जाए कि पानी में पीड़ित अंग डुबोने पर अन्य लोगों को नारू रोग हो सकता है।

बावड़ियों की सीढ़ियों को बंद करके, ऐसे स्रोतों को ढककर कुंओं का रूप दिया जा सकता है। अन्य जल स्रोतों को भी ढककर रखने से ऐसे रोगों से बचा जा सकता है। समय-समय पर पानी को साफ करने वाली दवाएं पानी में डालना चाहिए। पानी का उपयोग, खासकर पीने के लिए छानकर व उबालकर करना चाहिए।

कहने को तो ऐसी ढेर सारी बातें और कही जा सकती हैं। पर सवाल यह है कितने लोगों को पीने का पानी आसानी से मिलता है। जहां एक छोटा तालाब ही सबके लिए हो, वहां भैंस क्या और आदमी क्या! पानी गंदा है तो हुआ करे, कोई और साधन, स्रोत ही नहीं है उसके बदले में। ऐसे में प्रदूषित पानी का उपयोग न करें, तो फिर क्या करें?

कहने को तो कहा जाता है हमारा हक है कि पीने के लिए पानी... साफ पानी मिले। आखिर कब? हमारा हक है...इसका मतलब क्या है?

पड़ता है। झुमकी का पानी लाना भी ऐसा ही है।' मैंने कहा, 'नारू को फैलने से रोकने के लिए यह ज़रूरी है कि कुएं, बावड़ी या तालाब में अपने पीड़ित अंगों को न डुबाया जाए।'

मैं जब रवाना होने लगा तो मेरी निगाह उनके घर की दीवार पर लिखे एक नारे पर गई—

गुरू करो जानकर
पानी पिओ छानकर!
नारू का काम करो तमाम!

मैने भावसिंह से पूछा, 'यह दीवार पर क्या लिखा है?' भावसिंह बोला, 'हम पढ़े-लिखे नहीं हैं।' मैं सोच रहा था जब ये लोग निरक्षर हैं तो फिर इस तरह के नारों को मात्र दीवार पर लिख देने का क्या औचित्य है?

मैंने धार जिले के मनावर तथा गंधवानी तहसील के कुछ गांवों में भी जाकर नारू के रोगियों से बातचीत की।

मनावर से लगभग 7 किलोमीटर दूर एक गांव है—जुलवानिया। 200 की जनसंख्या वाले इस गांव में भी आदिवासी रहते हैं। रामसिंह के परिवार में 8 सदस्य हैं। पति-पत्नी के अलावा तीन लड़कियां और तीन लड़के हैं। लड़के अभी छोटे हैं। घर का कोई भी सदस्य पढ़ा-लिखा नहीं है। रामसिंह व उसकी दो लड़कियां नारू से पीड़ित हैं। रामसिंह अपनी तकलीफ तो भूल बैठा है लेकिन उसे चिंता है अपनी दोनों लड़कियों की। उन दोनों की शादी हो चुकी है पर ससुराल वाले उन्हें ले जाने में आनाकानी कर रहे हैं—नारू रोग की वजह से। बड़ी लड़की प्रेमा के पेट में सूजन आकर फफोला हो गया है। वह दिन रात कराहती रहती है। छोटी भंवर के दोनों पैरों से नारू निकल रहा है। इस साल बरसात

उसी में तुम पानी पियो, उसी में भैंस नहाए! नारू तो होगा ही ***अब अलग-अलग साधन कहां से लाएं!***

ऐसे कुएं का पानी पीना नारू को बुलाना है ***और कोई स्रोत न हो तो क्या करें!***

हैंडपंप का पानी साफ होता है, नारू से बचने का सर्वोत्तम उपाय : ***कितनों के नसीब में है हैंडपंप का पानी, कई जगह तो हरिजनों को हाथ भी लगाने नहीं दिया जाता!***

सभी चित्र - कालूराम शर्मा

नारू कहीं भी हो सकता है : ***पेट पर नारू से पीड़ित प्रेमा।***

नहीं होने से फसल नहीं पकी। मज़दूरी करके जैसे-तैसे अपना पेट भर रहे हैं। और ऊपर से यह नारू रोग। रामसिंह ने दवाखाने जाकर इलाज करवाने के बारे में कभी नहीं सोचा। रामसिंह को लगता है कि दवाखाने का इलाज करवाने पर पैसे लगते हैं। गांव में रामसिंह जैसे और भी नारू के रोगी हैं।

मनावर तहसील में एक गांव है— बोरझरी। इस गांव के सरपंच तथा उनका लड़का नारू रोग से पीड़ित हैं। ये भी आदिवासी हैं। लड़के का नाम है जगदीश, वह पांचवीं में पढ़ता है। जगदीश घर के अंदर खटिया पर लेटा हुआ था। नारू के कारण वह स्कूल भी नहीं जा पा रहा था। उसके पिता सरपंच भारतसिंह इस बात से वाकिफ हैं कि नारू रोग पानी से होता है। भारतसिंह ने बताया, 'नारू इस गांव में अक्सर होता रहता है। गांव में एक नलकूप है। जब नलकूप खराब हो जाता है तो कुएं का पानी पीना पड़ता है।' एक और महत्वपूर्ण बात पता चली कि जब मज़दूर या किसान जंगल में जाते तो जहां पर भी पानी मिलता है पी लेते हैं। कई लोग ऐसा गंदा पानी पीने से भी इस रोग के शिकार हो गए हैं।

भारतसिंह का कहना है कि नारू से प्रभावित लोगों तक स्वास्थ्य विभाग के कार्यकर्त्ता नहीं पहुंचते हैं। वे केवल दिखाने के लिए प्रचार करते हैं। उस इलाके में स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता हैं लेकिन वे एक-दो महीने में एक बार आते हैं तथा गलियों के चक्कर लगाकर चले जाते हैं!

15 साल की कमलई को तीन महीने पहले नारू रोग हुआ था। लेकिन नारू का कीड़ा आधा पैर के अंदर ही टूट गया। घाव भी ठीक हो गया। लेकिन उससे चलते नहीं बन रहा था। नारू जब अंदर ही टूट जाता है तो ज्यादा तकलीफ देता है।

प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र गंधवानी के स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता श्री गुप्ता से रोग से संबंधित बातचीत हुई। गुप्ता का कहना है कि नारू जड़ से तभी समाप्त होगा जब ग्रामीण लोगों को साफ पानी पीने को मिले। उन्होंने यह भी कहा कि शुद्ध जल व्यवस्था के लिए नलकूप लगाए जा रहे हैं। यदि इसमें स्वास्थ्य विभाग की भी राय ली जाए तो ज्यादा उत्तम होगा। स्वास्थ्य विभाग को पता है कि किस गांव में दूषित जल है।

धार से लगभग 8 किलोमीटर की दूरी पर एक गांव है—तिरला। वहां के एक शिक्षक श्री दयाराम पाटीदार से बात की तो उन्होंने बताया कि 8-10 वर्ष पूर्व तिरला में नारू खूब होता था। जिस बावड़ी का पानी लोग पीते थे, उसमें अंदर जाने के रास्ते को बंद कर दिया गया। इसके बाद वहां से नारू रोग हमेशा के लिए विदा हो गया।

मैं सोच रहा था तिरला से तो नारू विदा हो गया। पर आज़ादी के चालीस साल बाद भी पीने के पानी का 70% हिस्सा प्रदूषित है। क्या नारू और ऐसी अन्य बीमारियों को हम सचमुच विदा कर पाएंगे?

☐ **कालूराम शम**

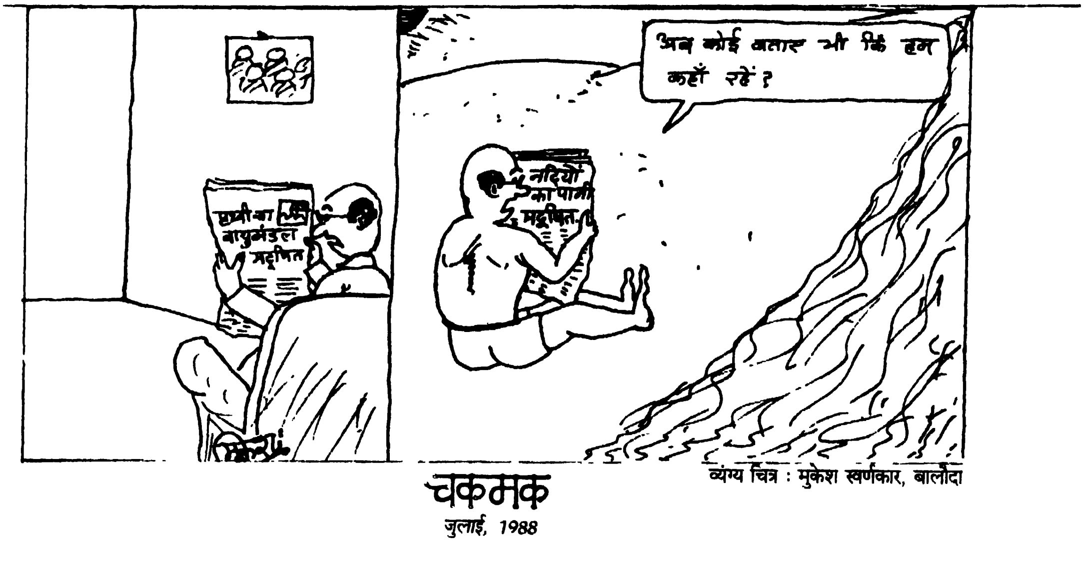

व्यंग्य चित्र : मुकेश स्वर्णकार, बालौदा

सूचना

अनुसूचित जाति, जनजाति एवं विमुक्त जाति के विद्यार्थियों के लिए प्रावीण्य छात्रवृत्तियां

पांचवीं या आठवीं कक्षा की वार्षिक बोर्ड परीक्षा में अच्छे अंक पाने वाले अनुसूचित जाति/जनजाति एवं विमुक्त जाति के छात्र/छात्राऐं आदिम जाति, हरिजन एवं पिछड़ा वर्ग कल्याण विभाग की "प्रावीण्य छात्रवृत्ति योजना" के अंतर्गत जिला स्तर पर बनाई जाने वाली प्रावीण्य सूची में शामिल किये जा सकते हैं।

मध्यप्रदेश सरकार के आदिम जाति, हरिजन एवं पिछड़ा वर्ग कल्याण विभाग द्वारा मेहनती विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करने के लिए प्रावीण्य छात्रवृत्ति (मेरिट स्कालरशिप) की दो योजनाएं चलाई जा रही हैं। जिन छात्र/छात्राओं ने पांचवीं कक्षा की सालाना परीक्षा में 45 प्रतिशत या उससे अधिक अंक प्राप्त किये हैं उन्हें कक्षा छठी से आठवीं तक की पढ़ाई मे अपनी प्रवीणता बढ़ाने के लिए "पूर्व माध्यमिक प्रावीण्य छात्रवृत्ति" और जिन्होंने आठवीं की सालाना परीक्षा 45 प्रतिशत या उससे अधिक अंकों से पास की है, उन्हें कक्षा नवीं और दसवीं की पढ़ाई में अपनी प्रवीणता बढ़ाने के लिए "उच्चतर माध्यमिक प्रावीण्य छात्रवृत्ति" मिल सकती है, बशर्ते कि ऐसे छात्र/छात्राऐं जिले के लिए निर्धारित छात्रवृत्ति संख्या में स्थान पाने में सफल हों। ध्यान रहे कि प्रत्येक जिले के लिए छात्रवृत्तियों की संख्या निश्चित है और छात्रवृत्ति उन्हीं छात्र/छात्राओं को मिलेगी जो मेरिट के अनुसार उक्त छात्रवृत्ति संख्या में स्थान पा सकें।

ये छात्रवृत्तियां एक शिक्षण सत्र में दस महीनों अर्थात जुलाई से अप्रैल के लिए मिलती हैं। "पूर्व माध्यमिक प्रावीण्य छात्रवृत्ति" की मासिक दर 40 रुपये तथा "उच्चतर माध्यमिक प्रावीण्य छात्रवृत्ति" की मासिक दर 50 रुपये है।

इन छात्रवृत्तियों को पाने की पात्रता इस प्रकार है:

(1) इन वर्गों के जिन विद्यार्थियों के पालक मध्यप्रदेश के मूल निवासी हैं, ऐसे विद्यार्थियों को ये छात्रवृत्तियां मिलेंगी।। ये उन पालकों के बच्चों को नहीं मिलेंगी, जो अन्य प्रदेशों के मूल निवासी हैं और म.प्र. मे केवल रोजगार/नौकरी के लिए रहते हैं।

(2) छात्र/छात्रा को शासकीय अथवा किसी मान्यता प्राप्त शिक्षण संस्था में नियमित विद्यार्थी के रूप में अध्ययन करना आवश्यक है।

(3) ये छात्रवृत्तियां स्वीकृत करने के लिए जिला स्तर पर जो प्रावीण्य सूची बनाई जायेगी, उसमें पांचवीं/आठवीं कक्षा पास करने वाले ऐसे विद्यार्थियों को ही शामिल किया जायेगा, जिन्होंने 45 प्रतिशत या उससे अधिक अंक प्राप्त किये हैं। लेकिन छात्रवृत्तियां उतनी ही संख्या में स्वीकृत की जायेंगी जितनी छात्रवृत्तियों का कोटा विभाग द्वारा जिले को दिया गया है।

(4) ये छात्रवृत्तियां केवल उन विद्यार्थियों को ही अगली कक्षा के लिए नवीनीकृत (रिन्यू) होंगी, जो प्रथम प्रयास में परीक्षा पास करेंगे तथा,

(5) विद्यार्थी के आचरण और पढ़ाई में संतोषजनक प्रगति के आधार पर ही ये छात्रवृत्तियां जारी रहेंगी अर्थात उन्हें पढ़ाई में लगातार मेहनत करना होगी और अपना आचरण ठीक रखना होगा।

इन योजनाओं को लागू कुछ अन्य विशेष बातें इस प्रकार हैं:

(1) इन छात्रवृत्तियों का उद्देश्य विद्यार्थी की प्रवीणता बढ़ाना है, इसलिए इनको पाने के लिए परिवार की आमदनी का कोई बंधन नहीं है, अर्थात् आपसे आमदनी बाबद प्रमाण-पत्र नहीं मांगा जायेगा।

(2) ये छात्रवृत्तियां शिक्षा विभाग की प्रावीण्य छात्रवृत्ति के साथ नहीं मिलेंगी। विद्यार्थी को अपनी शाला के प्रधानाध्यापक/प्राचार्य को लिखित मे विकल्प देना होगा कि वह दोनों विभागों की छात्रवृत्तियों मे से किसका लाभ लेना चाहता है।

(3) प्रावीण्य छात्रवृत्ति, चूंकि एक प्रकार की योग्यता छात्रवृत्ति है, इसलिए वह कक्षा 6 से 10 तक मिलने वाली सामान्य राज्य छात्रवृत्ति के साथ-साथ स्वीकृत की जा सकेगी।

(4) जिन विद्यार्थियों को प्रावीण्य छात्रवृत्ति स्वीकृत होगी, उन्हे चुनी हुई शालाओं में ही अध्ययन करना होगा।

(5) अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों के विद्यार्थियों को ये छात्रवृत्तियां जिला स्तर पर तथा विमुक्त जाति के विद्यार्थियों को ये शिक्षा संभाग के स्तर पर स्वीकृत की जायेंगी।

(6) प्रावीण्य छात्रवृत्ति पाने वाले विद्यार्थियों को सत्र में 10 दिन का आकस्मिक अवकाश तथा 7 दिन का बीमारी का अवकाश प्रधानाध्यापक/प्राचार्य स्वीकृत कर सकेंगे। छात्रवृत्ति का लाभ उठाने वाले विद्यार्थी की शाला में उपस्थिति (अवकाश के दिनों को छोड़कर) 75 प्रतिशत होना चाहिये।

(7) गर्मी की छुट्टियों के बाद शाला खुलने के पन्द्रह दिन के भीतर विद्यार्थी को शाला में प्रवेश लेना चाहिये अन्यथा उसे इस छात्रवृत्ति की पात्रता नहीं होगी। वैसे विशेष परिस्थिति में संस्था प्रमुख ऐसे मामलों में स्वीकृति देने के लिए सक्षम हैं।

(8) प्राथमिक एवं पूर्व माध्यमिक परीक्षा का परीक्षाफल घोषित होने के एक माह के भीतर ही प्रावीण्य सूची तैयार कर ली जायेगी, जिससे कि प्रार्थना पत्र आदि समय से तैयार कर लिये जाएं और सत्र शुरू होते ही विद्यार्थी चुनी हुई शालाओं में अध्ययन करने लगें। ऐसा होने पर छात्रवृत्ति समय पर मिलना सुनिश्चित हो सकेगा तथा,

(9) योजना के अंतर्गत न्यूनतम 45 प्रतिशत अंक पाने वाले 10 अन्य विद्यार्थियों की प्रतीक्षा सूची भी तैयार की जावेगी, जिससे कि विद्यार्थियों के छठीं/नवीं कक्षा में प्रवेश न लेने की स्थिति में प्रतीक्षा सूची में से आवश्यक संख्या में विद्यार्थियों का चयन किया जा सके। इस तरह चयन किये गये विद्यार्थी भी चुनी हुई शालाओं में ही अध्ययन करेंगे।

योजना के अंतर्गत जो प्रक्रिया निर्धारित की गई है, उसके मुताबिक निश्चित की गई शाला में प्रवेश लेते ही प्रधानाध्यापक/प्राचार्य चयनीकृत विद्यार्थियों के नये आवेदन पत्र एवं जिन्हें पिछले सत्र में प्रावीण्य छात्रवृत्ति मिल रही थी, उनके नवीनीकरण (रिन्यूवल) के आवेदन पत्र तीन जून तक आदिम, जाति हरिजन एवं पिछड़ा वर्ग कल्याण विभाग के सहायक आयुक्त/जिला संयोजक को अग्रेषित करेंगे। जिला कार्यालय में समुचित परीक्षण के उपरांत जिलाध्यक्ष प्रावीण्य छात्रवृत्ति स्वीकृत करेंगे और तदनुसार प्रधानाध्यापक/प्राचार्य को आवश्यक आदेश दिये जायेंगे।

अधिक जानकारी और मार्ग-दर्शन के लिए पूर्व माध्यमिक प्रावीण्य छात्रवृत्ति के बारे में शाला के प्रधानाध्यापक से तथा उच्चतर माध्यमिक प्रावीण्य छात्रवृत्ति के बारे में प्राचार्य से अथवा आदिम जाति, हरिजन एवं पिछड़ा वर्ग कल्याण विभाग के सहायक आयुक्त या जिलासंयोजक के दफ्तर से संपर्क किया जा सकता है।

माथापच्ची उत्तर : जून अंक के

वर्ग पहेली 9 : हल

1 का	ल	क	2 [illegible]	सो	3 आ	ज	4 क	र
म			ज		म		न	
		5 स	गा				6 टो	7 का
8 ब	लि	हा	री	9 गु	रु	10 आ	प	की
		य		ड़ि		य		
11 म	12 र	ता	व	या	13 न	क	र	ता
14 ना	म				15 शे	र		
	जा		16 भे		म			17 बा
18 जि	न	खो	जा	ति	न	पा	इ	यां

1. पहले में 22, दूसरे में 14 और तीसरे में 12।

2. आगे के दो पहिए जल्दी घिस जाएंगे क्योंकि वे पीछे के पहियों से छोटे है, इसलिए अधिक घूमेंगे।

3. बच्चे को। क्योंकि अनुपात मे बच्चे के शरीर से प्रति घन सेंटीमीटर मे उत्पन्न ताप, खर्च करने वाले शरीर के बाहरी क्षेत्रफल (त्वचा) से कम है।

4. 7744

5. 583 / 146 / 729 या 482 / 157 / 639

583		482
146	या	157
729		639

6. ऐसे 11 आकार प्राप्त कर सकते है।

7. उसे एक ही बार फोन करना पड़ेगा।

8. दो भाई दो बहन।

9. साठ गुटके

10. सात बच्चे

11. पहले ढेर मे 12 काले तथा 4 लाल
दूसरे ढेर मे 6 काले तथा 18 लाल
तीसरे ढेर में 8 काले तथा 4 लाल

13. $\frac{148}{296} + \frac{37}{50} = 1$

$123456789^{0} = 1$

$(9+8+6) - (7+5+4+3+2+1) = 1$

फार्म 4 (नियम 8 देखिए)

मासिक चकमक बाल विज्ञान पत्रिका के स्वामित्व और अन्य तथ्यों के संबंध में विवरण :

प्रकाशन का स्थान — भोपाल
प्रकाशन की अवधि — मासिक
प्रकाशक का नाम — विनोद रायना
राष्ट्रीयता — भारतीय
पता — एकलव्य, ई-1/208, अरेरा कालोनी भोपाल-462 016
मुद्रक का नाम — विनोद रायना
राष्ट्रीयता — भारतीय
पता — एकलव्य, ई-1/208, अरेरा कालोनी, भोपाल-462 016
संपादक का नाम — विनोद रायना
राष्ट्रीयता — भारतीय
पता — एकलव्य, ई-1/208, अरेरा कालोनी, भोपाल-462 016
उन व्यक्तियों के नाम और पते जिनका इस पत्रिका पर स्वामित्व है — एकलव्य ई-1/208, अरेरा कालोनी, भोपाल-462 016

मैं विनोद रायना, यह घोषणा करता हूं कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं

विनोद रायना
(प्रकाशक के हस्ताक्षर)

1 जुलाई, 1988

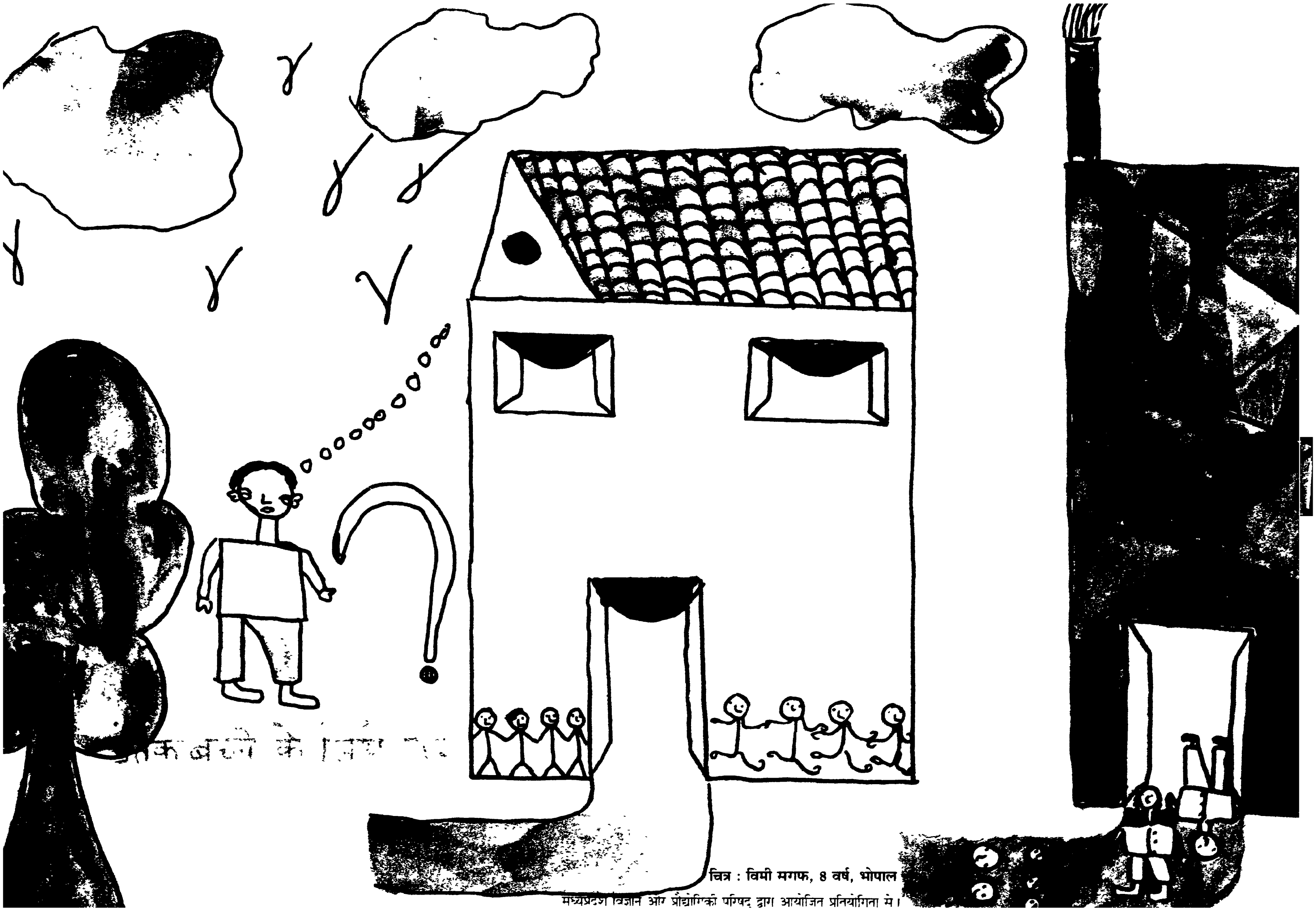

चित्र : विमी मगफ, ४ वर्ष, भोपाल
मध्यप्रदेश विज्ञान और प्रौद्योगिकी परिषद् द्वारा आयोजित प्रतियोगिता से।

12721